चन्दामामा
दिसम्बर १९८६

**"बनता है ये खेल खेल में हँसी खुशी में, रेल पेल में
सोच समझ कर झट चिपकाओ
मौज-मौज में इसे बनाओ"**

फ़ेवी फ़ेयरी

"जादू का करिश्मा नहीं
हाथ का कमाल है
पैसे का सवाल नहीं
काम बेमिसाल है।"
"जल्दी आकर हमें बताओ
करना क्या है—यह समझाओ।"
"जल्दी आओ
सब कुछ सुन लो....
सोचो समझो झट चिपकाओ
फ़ेविकोल एम आर को लाओ
मोर बनाओ,
गुड़िया, टोकरी, पर्स बनाओ
न चिप-चिप है, न है गंदगी
मज़े-मज़े में करते जाओ
करते जाओ॥"

इस जपानी फूल सनफ्लावर को बनाने की क्रमवार रीति
मुफ़्त प्राप्त करने के लिए यह कूपन भेजिए.
इस पते पर लिखिए 'फ़ेवी फ़ेयरी'
पोस्ट बॉक्स ११०८४, बम्बई ४०० ०२०

इस जपानी फूल सनफ्लावर को बनाने की क्रमवार रीति मुफ़्त प्राप्त करने के लिए, यह कूपन 'फ़ेवी फ़ेयरी' पोस्ट बॉक्स ११०८४ बम्बई ४०० ०२० के पते पर पोस्ट कर दो

नाम ______
उम्र ______
पता ______
______
नगर ______
राज्य ______ पिन ______
क्या आपको हमारा कलेंडर फ़ेविफ़ायर मिल गया हां/नहीं

फ़ेविकोल एम आर
सिन्थेटिक एड्हेसिव

उत्तम काम, उत्तम नाम फ़ैविकोल का यह परिणाम

OBM-8527 HN

डायमंड कामिक्स में

हर नन्हें मुन्ने की पहली पसंद

अंकुर का महान विशेषांक कार्टूनिस्ट प्राण का अंकुर

अंकुर और गोगो 4/-

अंकुर में पहली बार 48 पृष्ठों में अंकुर की शरारतों से भरपूर मनमोहक कारनामे

अन्य नये डायमंड कॉमिक्स—

4/-

4/-

4/-

4/-

4/-

अंकुर बाल बुक क्लब

डायमंड कॉमिक्स की बच्चों के लिये नई निराली अनुपम योजना अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनिये और हर माह घर बैठे डायमंड कॉमिक्स डाकव्यय की फ्री सुविधा के साथ प्राप्त करें।

सदस्य बनने के लिए आपको क्या करना होगा :—

1. संलग्न कूपन पर अपना नाम व पता भर कर भेज दें। नाम व पता साफ-साफ लिखें ताकि पढ़ने में आसानी हो।
2. सदस्यता शुल्क तीन रुपये मनी आर्डर या डाक टिकट द्वारा कूपन के साथ भेजें। सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।
3. हर माह पांच पुस्तकें एक साथ मंगवाने पर 2/- की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री की सुविधा दी जायेगी।
4. आपको हर माह Choice कार्ड भेजा जायेगा यदि आपको निर्धारित पुस्तकें पसन्द हैं तो वह कार्ड भरकर हमें न भेजें।
5. इसी योजना के अन्तर्गत हर माह की 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी।

सदस्यता कूपन

मुझे अंकुर बाल क्लब का सदस्य बना लें। सदस्यता शुल्क तीन रुपये मनी आर्डर/डाक टिकट से साथ भेजा जा रहा है। (सदस्यता शुल्क प्राप्त न होने की स्थिति में आपको सदस्यता नहीं दी जायेगी) मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूँ।

नाम ....

पिता का नाम ....

पता ....

डाकखाना ....

जिला ....

जूडो कराटे और बाक्सिंग सीखाने वाली पुस्तक

जूडो कराटे और बाक्सिंग कैसे सीखें 6/-

सचित्र जीवनी सहित

सुनील गावस्कर 10/-

विद्वानों के विचारों का मंथन

सुमन संचय 10/-

प्राथमिक चिकित्सा की जानकारी देने वाली पुस्तक

फस्ट एड 6/-

कम्प्यूटर जानकारी के लिए

कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग कोर्स 12/-

काका हाथरसी की कविताओं का रोचक संग्रह

मीठी मीठी हंसाइयां 6/-

डायमंड कॉमिक्स डाइजेस्ट

☐ चाचा चौधरी डाइजेस्ट I	12.00	☐ राजन इकबाल डाइजेस्ट	12.00
☐ चाचा चौधरी डाइजेस्ट II	12.00	☐ फौलादी सिंह डाइजेस्ट	12.00
☐ लम्बू मोटू डाइजेस्ट	12.00	☐ मोटू पतलू डाइजेस्ट	12.00
☐ ताऊजी डाइजेस्ट	12.00	☐ चाचा भतीजा डाइजेस्ट	12.00

डॉयमन्ड नॉलिज गाइड

जनरल नॉलिज की अनुपम पुस्तक ज्ञान विज्ञान का भंडार 10/-

डायमंड कामिक्स प्रा. लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

Publica/DC/Dec/86

चन्दामामा

दिसम्बर 1986

★

विषय-सूची

★

एक प्रति : २-५०

वार्षिक चन्दा : ३०-००

लाइफ़बॉय है जहां
तन्दुरुस्ती है वहां
LIFEBUOY
for health
LIFEBUOY
लाइफ़बॉय है तन्दुरुस्ती का नाम. दिन-भर की कड़ी
मेहनत के बाद... या जोशीले फुर्तीले खेल के बाद
लाइफ़बॉय से नहाने का मज़ा ही कुछ और है... यह आप में
फिर से सफ़ाई और तन्दुरुस्ती की उमंग जगाता है!
लाइफ़बॉय
मैल में छिपे कीटाणुओं को धो डालता है.
LINTAS L 95 1812 HI
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन
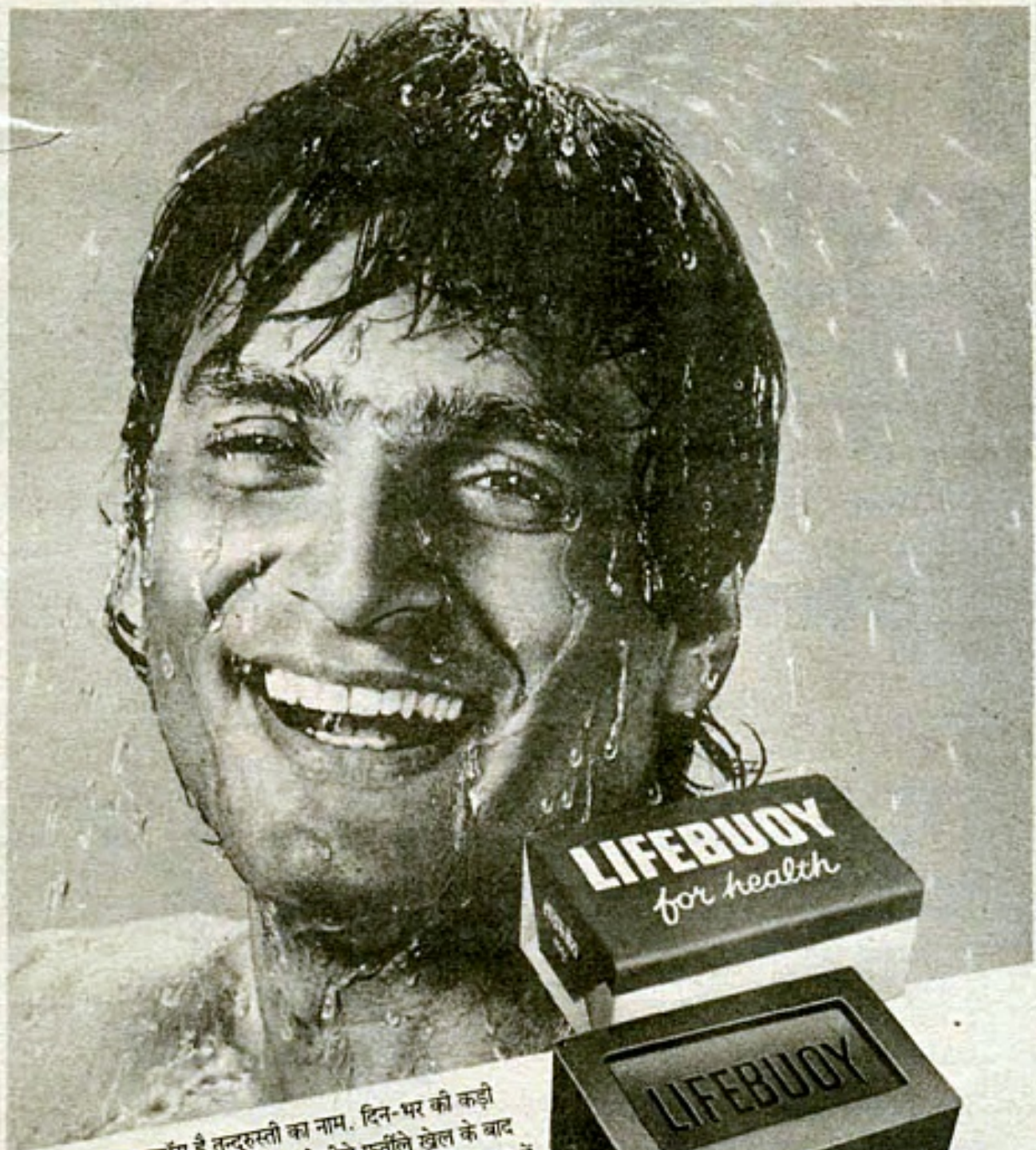
सांस की बदबू हटाइए. दांतों की सड़न रोकिए.

कोलगेट का सुरक्षा चक्र अपनाइए !

कोलगेट से नियमित रूप से दांत साफ करने से
आपके परिवार में सभी की सांस ताज़ा व साफ़ और दांत मज़बूत व स्वस्थ.
यानि कोलगेट की सुरक्षा.

यह देखिए कोलगेट का भरोसेमंद
फ़ार्मूला किस तरह आपके दांतों की सुरक्षा करता है :

दांतों में छिपे अन्नकणों से सांस में बदबू और दांत में सड़न पैदा करनेवाले कीटाणु बढ़ते हैं.

कोलगेट का अनोखा असरदार झाग दांतों के कोने में छिपे हुए अन्नकणों और कीटाणुओं को निकाल देता है.

कोलगेट से नियमित रूप से दांत साफ़ करने से सांस ताज़ा व साफ़ और दांत मज़बूत व स्वस्थ.

ध्यान रखिए कि आपके परिवार में सभी हर
भोजन के बाद कोलगेट से ही दांत साफ़ करें.
सांस की बदबू हटाइए. दांतों की सड़न रोकिए.
कोलगेट का सुरक्षा चक्र अपनाइए.

कोलगेट का ताज़ा
पेपरमिंट जैसा स्वाद मन में बस जाता है!

84-55 Hin

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

जीवन-निर्वाह के लिए मनुष्य को किसी न किसी काम का आश्रय लेना ही पड़ता है, चाहे वह नौकरी हो अथवा व्यापार ! व्यापार के लिए यह आवश्यक नहीं कि व्यक्ति अपनी ईमानदारी को त्याग दे । निपुणता एक अलग चीज़ है जो व्यापार में सफलता दिलाती है । 'ईमानदारी का फल' एक ऐसे युवक की कहानी है जो अपनी ईमानदारी के कारण सबका प्रिय बन प्रतिष्ठित व्यापारी का पद प्राप्त करता है ।

अमर वाणी

करावित्र शरीरस्य, नेत्रयोरिव पक्ष्मणी ।
अविचार्य प्रियं कुर्यात्, तन्मित्रं मित्रमुच्यते ।।

[हाथ जिस प्रकार शरीर की रक्षा करते हैं और पलकें नेत्रों की रक्षा करती हैं। वैसे ही जब विपदा के समय मित्र बिना कुछ सोच-विचार के मित्र की मदत करता है, तब वह मित्र कहलाता है ।]

वर्ष : ३९ | दिसम्बर १९८६ | अंक : ४

एक प्रति : २-५० :: वार्षिक चन्दा : ३०-००

सच्चा मित्र

नेपिल्स के एक मकान में अचानक आग लग गयी। राकी नाम का एक जर्मनी कुत्ता उसी मकान में पलकर बड़ा हुआ था। वह कुत्ता अपनी मालकिन एक तीन वर्ष की बच्ची की रक्षा के लिए आग में कूद पड़ा और उसे उसके वस्त्र एवं पैर पकड़कर बाहर खींच लाया। राकी नाम के इस कुत्ते ने आग की ज्वालाओं में फँसे कुछ और लोगों को बचाने का प्रयत्न भी किया और स्वयं जलकर मर गया।

नेपोलियन की नाव

नील युद्ध के एक माह पूर्व सन् १७९८ ई० की पहली जुलाई को नेपोलियन बोनापार्ट की 'लेपेट्रियट' नाम की नाव मिस्र के समुद्री तट पर डूब गयी। फ्रान्स के अन्वेषकों ने उस नौका का पता २८८ वर्ष बाद लगाया है।

फोटो खींचनेवाला फोन

क्षण भर में फोटो खींचकर एक का फोटो दूसरे के पास भेजनेवाले नये टेलिफोन को रूपायित किया गया है।

चोलराजा एंव विष्णुदास

कांचीपुर के चोलराजा भगवान विष्णु के भक्त थे। एक विशेष पर्व के दिन वे रत्नहार और स्वर्ण-पुष्पों को लेकर विष्णु-मंदिर में गये। इसके पहले ही विष्णुदास नाम के एक ग़रीब भक्त ने भगवान विष्णु की प्रतिमा को तुलसीदलों से अलंकृत कर दिया था। चोलराजा इस बात से क्रुद्ध हो उठे। उनकी दृष्टि से पर्व के दिन भगवान का इतना साधारण अलंकरण नहीं किया जाना चाहिए था। इसके बाद राजा ने स्वर्णाभूषणों एवं रत्नहारों से भगवान की मूर्ति को सजाया और दान आदि करके बड़े वैभव के साथ पूजा-अर्चना की।

गरीब विष्णुदास ने एक निर्जन प्रदेश में जाकर भगवान विष्णु की मूर्ति प्रतिष्ठित की और भिक्षाटन करने से जो चावल उसे प्राप्त हुआ, उसे पकाकर उसने भगवान को नैवेद्य अर्पित किया एवं पूजा-आराधना में लीन हो गया। एक दिन ध्यानस्थ विष्णुदास अपनी आँखें खोलकर देखने लगा। तभी एक गरीब मनुष्य वहाँ आया और भगवान को अर्पित नैवेद्य उठाने लगा। जब उसने देखा कि पुजारी विष्णुदास की आँखें खुली हुई हैं तो वह डर कर, नैवेद्य लिये बिना ही वहाँ से भाग गया। उसे भागते देख विष्णुदास ने प्रसाद अपने हाथ में लिया और उस गरीब आदमी को आवाज़ देते हुए उसके पीछे भागने लगा। गरीब आदमी कुछ दूर दौड़कर थक गया और नीचे गिर पड़ा। विष्णुदास ने उसके मुख पर पानी छिड़का तो वह होश में आया। दूसरे ही क्षण भगवान विष्णु प्रत्यक्ष हुए और विष्णुदास को आलिंगन करके उसे अपने भीतर लय कर लिया।

भगवान के साथ विष्णुदास के ऐक्य का समाचार जब चोलराजा को मिला, तो वे यह सोचकर चिंता में डूब गये कि मैं जो ये इतने यज्ञ-याग, दान-पुण्य करता हूँ, उनका क्या मूल्य है? चोलराज वैरागी होकर प्राण त्यागने के लिए तत्पर हो गये। तब भगवान विष्णु प्रत्यक्ष हुए और राजा से बोले, "चोलराज, तुम और विष्णुदास दोनों ही मेरे भक्त हो। पर तुम्हारे अन्दर अपने राजपद का अहंकार था, उसे दूर करने के लिए ही मैंने ऐसा किया।" यह कहकर भगवान विष्णु ने चोलराजा को आशीर्वाद दिया।

प्रेम-परीक्षा

वसन्तगिरि राज्य के शासक राजा चंद्रकान्त अभी युवा ही थे और उनका विवाह भी नहीं हुआ था। वे एक दिन सूर्योदय होते ही घोड़े पर सवार हुए और पास के एक अरण्य में विहार करने के लिए अकेले निकल पड़े। वहाँ उन्होंने एक सरोवर में स्नान किया। जब वे सरोवर से बाहर आ रहे थे, तब उनकी दृष्टि भीलों की बस्ती में जा रही एक युवती पर पड़ी। उसके सौन्दर्य एवं उसके मुख-मंडल की निर्मलता से राजा चंद्रकान्त बहुत प्रभावित हुए।

कुछ देर बाद राजा चंद्रकान्त अपने महल को लौट आये। राजा चंद्रकान्त के हृदय में उस युवती के साथ विवाह करने की इच्छा बलवती हो उठी। पर उनके मन में यह शंका भी थी कि एक देश के राजा को क्या एक भील युवती के साथ विवाह करना उचित है?

राजा कई दिन तक अन्यमनस्क बने रहे। तब एक दिन मंत्री देवशर्माने उनसे पूछा, "महाराज, आप किसी समस्या के कारण चिन्ताग्रस्त हैं और अत्यधिक गंभीर नज़र आ रहे हैं। क्या मैं आपकी चिन्ता का कारण जान सकता हूँ?"

राजा चंद्रकान्त ने अपने मन की बात मंत्री देवशर्मा के सामने स्पष्ट करते हुए कहा, "मेरे मन में उस युवती के साथ विवाह करने की इच्छा बलवती हो उठी है। लेकिन एक राजा होने के नाते मैं इस बात पर विचार कर रहा हूँ कि ऐसा करना राज्य के हित में होगा अथवा नहीं?"

मंत्री देवशर्मा ने क्षण भर सोचकर कहा, "महाराज, इसमें हित - अहित, न्याय-अन्याय, धर्म-अधर्म का प्रश्न ही नहीं उठता है।" यह कहकर मंत्री ने राजा के मुकुट के एक रत्न की ओर संकेत करते हुए कहा, "महाराज, इस रत्न को ही उदाहरण के रूप में लीजिये! किसी समय यह रत्न मिट्टी में पड़ा हुआ था। पर यह बाहर

राधारमण

आया, सान पर तराशा गया और अब यह एक राजा के मुकुट की शोभा बन गया है। आप भी ऐसा ही कर सकते हैं। आप उस भील युवती को अरण्य - जीवन से बाहर निकाल राज-परिवार के योग्य मान-मर्यादा, आचरण-व्यवहार सिखा सकते हैं और उसके साथ विवाह करके जनता के लिए एक आदर्श कायम कर सकते हैं। मैं कल ही कुछ विशिष्ट परिजनों के साथ भील-बस्ती में जाऊँगा।"

मंत्री देवशर्मा की बातों से राजा चंद्रकान्त का मन शान्त और सन्तुष्ट हुआ। वे बोले, "मंत्रिवर, आप नहीं, मैं स्वयं वहाँ जाऊँगा। मैंने उस युवती को देखा है, पर उसने तो मुझे नहीं देखा। उसे भी चाहिए कि वह मुझे देख ले!"

दूसरे दिन राजा चंद्रकान्त अरण्य में भील-बस्ती में गये। वह भील युवती भील सरदार की पुत्री थी। नाम था चंपकवल्ली।

भील जाति के सरदार शरभदेव ने अपने रीति-रिवाज़ के अनुसार राजा का बहुत आदर-सत्कार किया और पूछा, "महाराज, आप स्वयं हमारी बस्ती में पधारे हैं, यह हमारे लिए अत्यन्त प्रसन्नता और आश्चर्य की बात है। मैं आपके आगमन का कारण जानने के लिए उत्सुक हूँ। महाराज आज्ञा करें!"

राजा चंद्रकान्त ने द्वार के निकट खड़ी चंपकवल्ली की ओर संकेत करके कहा—"अगर आपकी पुत्री को स्वीकार हो तो मैं उससे विवाह करना चाहता हूँ। मैं इसी कामना को लेकर यहाँ आया हूँ।

राजा चंद्रकान्त के मुख से यह बात सुनकर
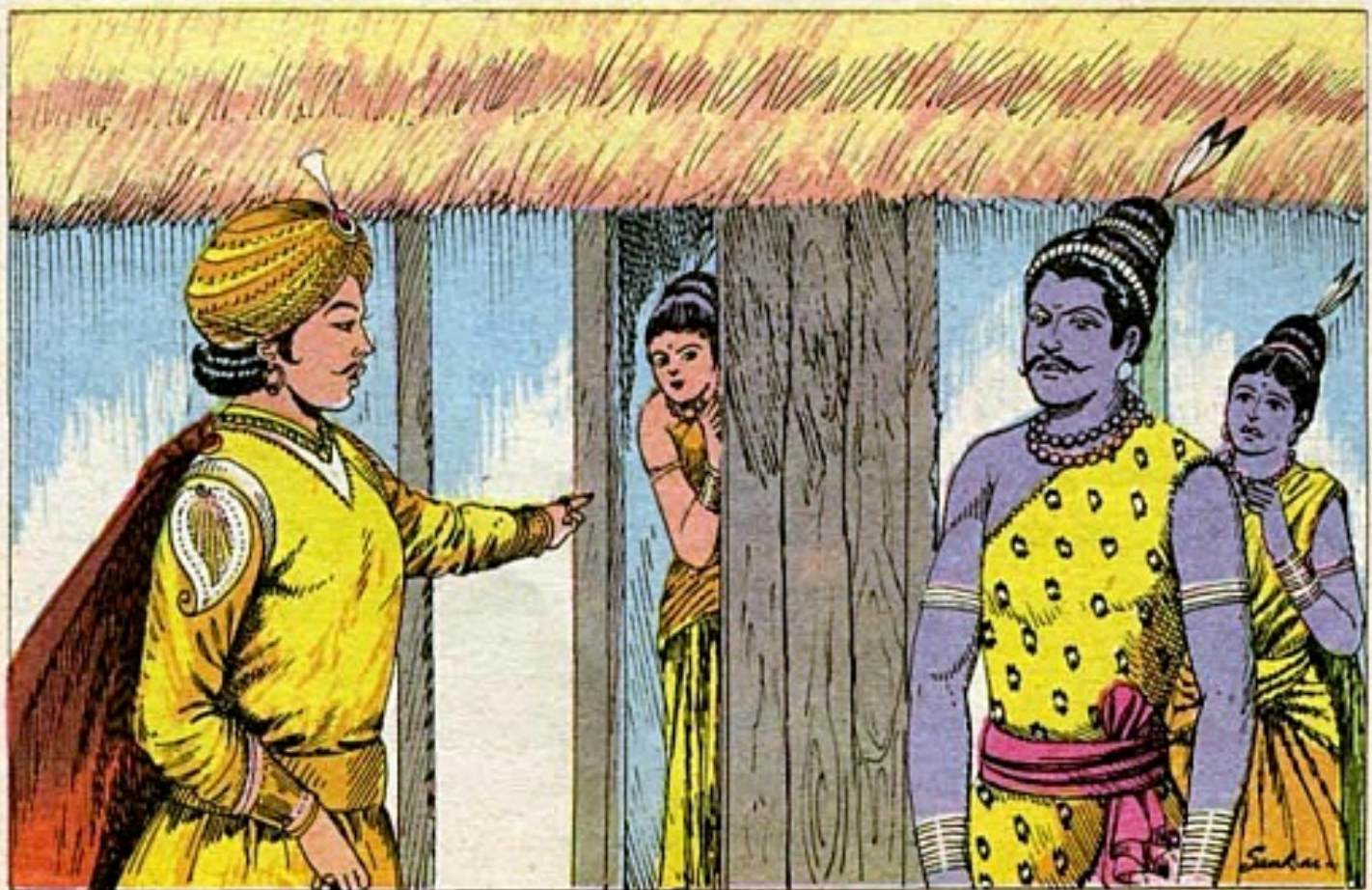
चंपकवल्ली सकुचाकर घर के अन्दर चली गयी। भील नायक शरभदेव भी घर के भीतर चला गया। परिवार के सब सदस्यों से विचार-विमर्श करके वह बाहर आया और राजा से बोला, "महाराज, क्षमा कीजिये! इस विवाह का होना संभव नहीं है। विवाह होने पर भी चंपकवल्ली आपके साथ राजधानी नहीं जा सकेगी। वह यहीं रहेगी। इस शर्त पर ही हम और हमारा समाज इस विवाह को स्वीकार कर सकता है।"

भीलनायक की बात पर राजा चंद्रकान्त को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे बोले, "विवाह के बाद अगर मेरी पत्नी मेरे साथ मेरे भवन में नहीं रहती है, तो उस विवाह का क्या प्रयोजन है?" यह कहकर राजा अपने महल को लौट गये।

सारा समाचार मिलते ही मंत्री देवशर्मा के क्रोध का पार न रहा। उसने राजा चंद्रकान्त से पूछा, "महाराज, भील-नायक शरभदेव के इस व्यवहार के बाद भी क्या आप उसकी बेटी चंपकवल्ली से विवाह करना चाहते हैं?"

इस प्रश्न के उत्तर में चंद्रकान्त ने स्वीकृति में अपना सिर हिला दिया और कहा, "लेकिन शरभदेव ने जो शर्त रखी है, वह मुझे स्वीकार नहीं है।"

मंत्री कुछ देर मौन सोचता खड़ा रह गया, फिर मन ही मन कुछ निर्णय करके बोला, "महाराज, अब मैं चलता हूँ, मुझे आज्ञा दीजिये।" मंत्री वहाँ से चला गया।

अगले दिन सबेरे मंत्री देवशर्मा ने राजा चंद्रकान्त से प्रार्थना की कि वे उद्यान में साथ टहलने के लिए आने की कृपा करें।

राजा और मंत्री उद्यान में टहल रहे थे कि एक स्थल पर परिचारिकाओं के बीच राजकुमारी की

वेशभूषा में सज्जित चंपकवल्ली राजा को दिखाई दी। राजा चंद्रकान्त ने विस्मित होकर मंत्री देवशर्मा की ओर देखा। मंत्री ने मंद-मंद मुस्कराकर कहा, "महाराज, पिछली रात मैंने कुछ सशस्त्र सैनिकों के साथ चार दासियों को भेजकर भील बस्ती से कुमारी चंपकवल्ली को बुलवा लिया है। इनके पिता शरभदेव तथा अन्य भील युवकों ने हमारे सैनिकों का कोई विरोध प्रकट नहीं किया। संभवतः वे समझ गये हैं कि राजा की इच्छा का तिरस्कार करना अपराध है!"

मंत्री देवशर्मा के इस कार्य पर राजा चंद्रकान्त अत्यन्त क्षुब्ध हो उठे और बोले. "मंत्रिवर, विवाह तो प्रसन्नता के लिए होता है, बलप्रयोग करके किसी को विवश करना उचित नहीं है। मैं स्वयं चंपकवल्ली को आज शाम इनके पिता को सौंपने के लिए जाऊँगा।"

अपने वचन के अनुसार राजा चंद्रकान्त चंपकवल्ली को भीलबस्ती में ले गये। भीलनायक शरभदेव ने अपने परिवार एवं बन्धु-बान्धुवों के साथ आगे बढ़कर राजा का स्वागत किया और कहा, "महाराज, मैंने आपकी प्रेम-परीक्षा लेने के लिए विवाह की वह शर्त रखी थी। जब आप यहाँ आये थे तो आपने विवाह का प्रस्ताव रखते हुए ये शब्द कहे थे, 'अगर आपकी पुत्री को स्वीकार हो तो मैं उसके साथ विवाह करना चाहता हूँ। तभी मैंने आपके बड़प्पन को देख लिया था। फिर भी, आदिवासी होने के कारण मेरे मन में यह भय था कि कहीं विवाह के बाद आप यह न कह बैठे कि मेरी पुत्री पट्टमहिषी बनने के क़ाबिल नहीं है। इसीलिए मैंने आपके प्रेम की गहरायी जानने के लिए बीच में एक शर्त रख दी। मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि नारी के लिए उसका पति ही उसका सर्वस्व होता है।"

शरभदेव के शब्दों से चंद्रकान्त को अपार आनन्द हुआ। शीघ्र ही उनका विवाह राजसी वैभव के साथ चंपकवल्ली से संपन्न हुआ।

चंपकवल्ली ने श्रेष्ठ आचार्यों के द्वारा राजमहिषी के योग्य शिक्षा-संस्कारों को शीघ्र ही सीख लिया और वह महाराजा चंद्रकान्त की योग्य पट्टमहिषी बनी।

पड़ोसी का भूत

रंगराज सिद्धपुर गाँव का ज़मींदार था। गाँव के बीचों-बीच उसका दो मंजिला पक्का मकान था, जिसमें वह रहता था। उस खूबसूरत मकान की बग़ल में शिवनाथ का खपरैल वाला एक कच्चा मकान था। शिवनाथ एक गरीब आदमी था और पड़ोस में होने के कारण ज़मींदार रंगराज की आँखों का काँटा बना हुआ था।

ज़मींदार रंगराज शिवनाथ पर हमेशा नाराज़ रहता था और सदा इस बात की कोशिश किया करता था कि कोई न कोई उपाय करके शिवनाथ को अपने पड़ोस से हटा दिया जाये।

रंगराज के पास शिवनाथ के खिलाफ़ हमेशा कोई न कोई आरोप रहता था। एक दिन रंगराज ने शिवनाथ को बुलाकर कहा, "अरे शिवनाथ, तुमहारे दुष्ट मुर्गे मेरे पिछवाड़े के पौधों तथा आँवलों को ख़राब कर रहे हैं!" फिर एक दिन बुलाकर डांटा, "अरे, तुम्हारे घर का गंदा पानी मेरे मकान के सामने कीचड़ करता है। मैं तुम्हें ख़बरदार किये देता हूँ।"

शिवनाथ जानता था कि ज़मींदार उसका खपरैलवाला घर हथियाना चाहता है। वह कड़ी मज़दूरी करके अपने परिवार का पेट पालता था और अपने बाप-दादाओं के उस पुराने मकान में अपने दिन काटता था। अगर वह अपना मकान रंगराज को बेच देता तो फिर उस गाँव में उसे सिर छुपाने की जगह मिलना संभव नहीं था।

जब शिवनाथ रंगराज की रोज़-रोज़ की डांट-फटकार और धमकियों से तंग आकर भी नहीं झुका, तब रंगराज ने उसे अपने घर बुलाकर धमकी देते हुए कहा, "देखो शिवनाथ, तुम्हारी मुर्गियों और बतखों के कारण तो मेरा घर पहले ही गन्दा हो जाता था और अब तुम्हारे बच्चे भी मेरे परिवार की परेशानी का कारण बन गये हैं। उनके शोर-शराबे और शरारतों से हम लोगों को

निर्मला गर्ग

कुछ साल बीत गये। रंगराज ने देहाती जीवन छोड़कर किसी शहर में रहने का निश्चय किया। उसके बच्चों की पढ़ाई का प्रश्न भी था। उसने अपने गाँव के निकटवर्ती शहर चंद्रनगर में एक अच्छा मकान ख़रीद लिया और अपने औरत-बच्चों के साथ वहीं रहने लगा।

रंगराज ने जिस दिन अपने परिवार के साथ चंद्रनगर के मकान में डेरा डाला, उसी दिन पड़ोस के मकान में बड़ा शोर मचा। कारण जानने के लिए रंगराज अपने घर से निकला। तब तक पास के मकान के बाहर अच्छी ख़ासी भीड़ जमा हो गयी थी। रंगराज ने भीड़ में से एक आदमी को बुलाकर पूछा, "अरे भाई, क्या बात है? यहाँ इतने लोग क्यों जमा हुए हैं?"

उस आदमी ने कहा, "महाशय, अभी कुछ ही दिन पहले सेठ रामशरण ने काफ़ी धन देकर इस मकान को ख़रीदा था। पर उन्होंने इस मकान में एक भी दिन शांति से नहीं गुज़ारा। इस घर में एक भूत घुस आया है। उस भूत को भगाने के लिए रामशरण ने अनेक तंत्र-मंत्र, जादू-टोने करवाये, पर वह भूत इस मकान को छोड़ने का नाम नहीं ले रहा है। आख़िर रामशरण ने विवश होकर केरल से एक बड़े मांत्रिक श्रीधर को बुलवाया है। वही इस समय कुछ मंत्र-प्रयोग कर रहा है।"

यह सब सुनकर रंगराज रामशरण के घर के भीतर चला गया और मांत्रिक के सारे कार्य-कलापों को देखने लगा। मांत्रिक श्रीधर ने

दिन में चैन नहीं, रात को नींद नहीं। अपना पूजा-पाठ भी हम ठीक से नहीं कर पाते। ऐसा लगता है कि तुम्हारा घर जलकर भस्म हो जायेगा, तब जाकर कहीं हमें चैन नसीब होगा।"

घर के जल जाने की बात सुनकर शिवनाथ के कंपकंपी छूट गयी। उसने सोचा कि ज़मींदार के मन में जब ऐसा विचार आगया है तो उसे वह कभी न कभी कार्य रूप में परिणत करके ही चैन लेगा। ऐसे क्रूर पड़ोसी की यातनाएँ झेलते रहने से तो बेहतर है कि इस गाँव को ही छोड़ दिया जाये। शिवनाथ ने कहीं दूर चले जाने में ही अपनी ख़ैरियत समझी और रंगनाज को साधारण मूल्य में अपना मकान बेचकर अपने परिवार-सहित किसी दूसरे गाँव में चला गया।

जादू-टोने की सारी आवश्यक सामग्री को एकत्रित करके रामशरण से कहा, "सेठ जी, आप किसी प्रकार की चिन्ता न कीजिये! दुर्भाग्य से आपके घर में एक भूत ने अड्डा जमा लिया है। पर इसे आप अपना सौभाग्य समझिये कि मैं ठीक समय पर यहाँ आ पहुँचा हूँ। मेरी तांत्रिक पूजा के समाप्त होते-होते यह भूत आपके शहर की सीमा से बाहर भाग जायेगा।"

रामशरण उदास स्वर में बोला, "यह मेरा दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है? दरअसल मुझे यह पड़ोसवाला मकान ख़रीदना चाहिए था, लेकिन मेरी बदनसीबी, रंगराज नाम के किसी धनवान जमींदार ने अधिक पैसा देकर इस मकान को ख़रीद लिया और मेरे भाग्य में यह भूतवाला घर आया। अब मेरा यह अन्तिम प्रयत्न है। अगर अब भी इस भूत ने मेरे मकान को नहीं छोड़ा तो मैं अपने इस मकान को भाग्य के भरोसे छोड़कर कहीं और चला जाऊँगा।"

सेठ रामशरण ने अपनी बात अभी पूरी ही की थी कि उस घर के भूत ने गरज कर पूछा; "क्या कहा? क्या पड़ोसवाले मकान को रंगराज ने ख़रीद लिया है? यह रंगराज सिद्धपुर गाँव का ज़मींदार रंगराज तो नहीं?"

भूत की बात सुनकर वहाँ एकत्रित सभी लोग भयभीत हो गये। मांत्रिक श्रीधर ने सेठ रामशरण की ओर आश्चर्यचकित होकर देखा।

सेठ रामशरण ने मांत्रिक से कहा, "जी हाँ! पड़ोसवाले मकान को सिद्धपुर के ज़मींदार रंगराज

ने ही ख़रीदा है।"

तब भूत बड़े उदासीन स्वर में बोला, "तब तो मैं इस मकान को ही नहीं, बल्कि इस पूरे इलाके को ही छोड़कर कहीं भाग जाऊँगा।"

मांत्रिक श्रीधर गर्व से मुस्करा उठा। उसने अपनी मूँछों पर ताव देकर कहा, "देखा! मैंने भूत को भगाने के लिए अभी उच्चाटन भी शुरू नहीं किया और वह भागने की तैयारी करने लगा।"

तब भूत विकट अट्टहास करके बोला, "अरे मूर्ख तांत्रिक! मैं इस मकान को तुम्हारे तंत्र-मंत्र और जादू-टोने से डरकर नहीं छोड़ रहा। असली कारण सुनो। मेरा नाम शिवनाथ है। मैं सिद्धपुर में रंगराज नाम के इस क्रूर जमींदार के पड़ोस में रहता था। इसने मुझ पर इतने अत्याचार किये कि

नरक-यातनाएँ भी उनके सामने कम होंगी। अन्त में, मुझे वह घर छोड़ना पड़ा। मेरा परिवार तितर-बितर हो गया और मैं असमय ही मौत का शिकार हो गया। मैं आज आपको एक बात बताता हूँ। झगड़ा-फसाद और अत्याचार करनेवाले पड़ोसी मकानों में बसे हुए भूतों से कहीं ज़्यादा ख़तरनाक होते हैं। अब वह क्रूर पड़ोसी रंगराज यहाँ आया है। आप सब शीघ्र ही मेरी बात की सच्चाई को समझ जाओगे!"

इसके बाद रामशरण के उस मकान में भयानक वात्याचक्र उठा। उसके दबाव से मांत्रिक श्रीधर के सामने रखे पूजा-सामग्रीवले थाल ऊपर उछल गये और उनकी सामग्री सारे मकान में बिखर गयीं। मांत्रिक डर कर उच्च स्वर में मंत्रोच्चार करने लगा। पर इसी बीच भूत खिड़की की राह बाहर निकल गया।

भीड़ में कुछ लोग रंगराज की ओर देखकर कानाफूसी करने लगे। लोगों के मन की शंका को समझकर रंगराज ने अपनी सफाई देते हुए कहा, "मुझे ऐसा लगता है कि भूत ने जिस रंगराज की बात कही, शायद वह व्यक्ति मैं ही हूँ यह भूत बड़ा प्रपंची मालूम होता है। आज के ज़माने में तो मनुष्य के अन्दर ही सत्यता का लोप हो गया है। फिर हम भूतों की बातों पर, उनकी सच्चाई पर कैसे विश्वास कर सकते हैं?"

"हाँ, आपकी बात बिलकुल सच है! हम कैसे कह सकते हैं यह शिवनाथ का भूत है या किसी भूतनाथ का भूत? मांत्रिक की शक्ति को हम न मानें, इसलिए इस भूत ने ये अनर्गल बातें कह दी होंगी।" भीड़ के एक आदमी ने रंगराज का बचाव करते हुए कहा।

उसकी स्वीकृति में कुछ लोगों ने अपने सिर हिलाये। पर रंगराज तो अपने जीवन की उस क्रूर सच्चाई को जानता था। वह सिर झुकाकर चुपचाप वहाँ से चला गया।

उस दिन के बाद रंगराज के जीवन में बहुत बड़ा परिवर्तन आगया। वह सबके साथ प्रेम और उदारता का व्यवहार करने लगा और समय पर सबका सहायक होने के कारण सज्जन पुरुष कहलाया।

७

[उग्राक्ष के द्वारा बन्दी बनाये गये अमरपाल ने चित्रसेन को ज्वालाद्वीप के निवासियों के बारे में कुछ रहस्य बताये। राज-द्रोह करनेवाले नागवर्मा के बारे में चित्रसेन को कुछ रहस्य ज्ञात हुए। अमरपाल ने चित्रसेन को आश्वासन दिया कि वह राजद्रोही नागवर्मा की मदद करनेवाले बाघचर्मधारियों का संहार करेगा और उनके वाहन उन भयंकर पक्षियों को भी उनकी झोंपड़ियों में आग लगाकर भस्म कर देगा। आगे पढ़िये...]

अमरपाल की बातें सुनकर चित्रसेन ने उग्राक्ष की तरफ़ देखा। अमरपाल की बातों पर उग्राक्ष का विश्वास जम गया। वह उत्साहित होकर उठ खड़ा हुआ और बोला, "मैं अपने राक्षस सेवकों में से तीन को अमरपाल की मदद के लिए भेज दूँगा। यदि अमरपाल को इस काम में सफलता मिलती है तो मैं अमरपाल को पुरस्कार देकर उसका भव्य सम्मान करूँगा।"

चित्रसेन ने पल भर विचार करके कहा, "मैं ऐसा सोचता हूँ कि इस कार्य के साथ ही हमें कपिलपुर पर अधिकार कर लेना चाहिए। अपने राजा वीरसिंह को बन्दी बनाकर सेनापति नागवर्मा मेरे पिता के राज्य धवलगिरि पर चढ़ाई करने गया हुआ है। इस समय कपिलपुर की रक्षा करने के लिए वहाँ पर अधिक सेना नहीं होनी चाहिए। इसलिए हम अचानक हमला करके कपिलपुर के दुर्ग पर अधिकार कर सकते हैं।"

चित्रसेन की बातें सुनकर उग्राक्ष खुशी के

न्याय-संगत होगा? इसके अलावा, यह भी तो संभव है कि राजकुमारी क़ांतिमती ने इसके पूर्व ही अपने मन में किसी को अपना वर चुन लिया हो! यह राक्षसवंशी उग्राक्ष मानव-जाति की सामाजिक मर्यादाओं से एकदम अनभिज्ञ है

"उग्राक्ष, इस समय हमारा कर्त्तव्य नागवर्मा को पराजित करना है। इस तरह हम अपने रास्ते के कंटक एक शत्रु से पिंड छुड़ा सकते हैं। कपिलपुर के राजा के रूप में हम वीरसिंह को ही पुनः राज्याभिषिक्त करेंगे। लेकिन इन सब कामों को तभी संपन्न किया जा सकता है, जब हम उन भयानक पक्षियों का उनके सवारों सहित ख़ात्मा कर दें। जब तक कपिलपुर के सीमावर्ती जंगल में ये पक्षी जीवित हैं, तब तक हमारी विशाल सेनाएँ भी कुछ नहीं कर सकेंगी। हम न केवल पराजित होंगे, बल्कि उनके ग्रास बन जायेंगे।" चित्रसेन ने समझाया।

"महाराज, आप यह काम मुझ पर छोड़ दीजिये। आप अपनी सेनाओं के साथ जंगल में छिप जाइये! भयंकर पक्षियों के झोंपड़ियों में जलकर भस्म होते ही हम लोग कपिलपुर पर हमला कर देंगे।" अमरपाल ने कहा।

उग्राक्ष और चित्रसेन ने भी अमरपाल की बात को स्वीकृति दी। इसके बाद अमरपाल की मदद के लिए दो राक्षस तथा चार सैनिक उसके साथ चल पड़े। अमरपाल उन्हें साथ लेकर देखते-देखते जंगल में ओझल होगया। चित्रसेन

कारण उछल पड़ा और बोला, "चित्रसेन, तुम समझदार हो। यह तो बहुत ही बढ़िया विचार है। पर हमारा उद्देश्य केवल कपिलपुर पर ही अधिकार करना नहीं होना चाहिए, बल्कि हमें राजकुमारी कांतिमती को भी नागवर्माके हाथों से बचाना है। तुम युवक हो और अविवाहित हो। एक ही वार से तुम्हें दो लक्ष्य प्राप्त करने हैं—एक तो कपिलपुर का राज्य, दूसरा अत्यन्त रूपवती राजकुमारी कांतिमती का हाथ।"

उग्राक्ष की बातों ने चित्रसेन के मन में हलचल मचा दी। वह सोचने लगा, क्या कपिलपुर के राजा वीरसिंह के जीवित रहते उनके राज्य को अपने राज्य में मिलाना और उनकी पुत्री के साथ राजा की अनुमति के बिना विवाह करना

तथा उग्राक्ष ने अपनी सेनाओं तथा अनुचरों को सन्नद्ध होने के लिए आदेश भेज दिये ।

इस बीच अमरपाल अपने साथियों के साथ जंगल में आगे बढ़ता गया और दोपहर तक कपिलपुर के समीपवर्ती जंगल में पहुँच गया । वहाँ क़रीब सौ भयंकर पक्षी विशाल झोंपड़ों में बंधे हुए थे। उनके झोंपड़ों के पास ही उनके पहरेदारों की झोंपड़ियाँ थीं ।

अमरपाल ने अपने सभी अनुचरों को एक स्थान पर ले जाकर रोक दिया, फिर उसने उनसे पक्षियों के पहरेदारों के निवास-स्थान को दिखाकर कहा, "मैं इस प्रदेश से भलीभाँति परिचित हूँ । मैं उन पहरेदारों में से हर एक को जानता हूँ । मैं उनके पास जाकर सबसे पहले उन्हें एक जगह इकट्ठा कर दूँगा । तभी तुम लोग उन पर हमला बोल देना और उन्हें मौत के घाट उतार देना । इसके बाद हम भयंकर पक्षियों की उन झोंपड़ियों में आग लगा देंगे ।"

अमरपाल के अनुचरों ने उसके आदेशों को भलीभाँति समझ लिया । अमरपाल पहरेदारों के झोंपड़ों के पास जाकर ज़ोर से चिल्ला उठा । उसकी आवाज़ सुनकर सभी पहरेदार अपनी झोंपड़ियों से बाहर निकल आये और हड़बड़ाकर अमर पाल के चारों तरफ़ जमा हो गये । वे कुल मिलाकर बीस से अधिक न थे ।

"अमरपाल, कितना अच्छा हुआ कि तुम बच गये । हमने तो सोचा था कि तुम उन क्रूर राक्षसों

के हाथों अपनी जान गँवा बैठे हो ।" पहरेदारों ने एक स्वर में कहा ।

"सचमुच ही मैं मौत के मुँह से बाहर निकल कर आया हूँ । तुमसे क्या बताऊँ कि मैं किस तरह भागकर तुम्हारे पास पहुँचा हूँ! कितनी चालें चलीं, कितने ख़तरे पार किये, तब मैं आज तुम्हारे सामने हूँ । सबसे पहले तुम मुझे यह बताओ कि हमारे सारे पक्षी सुरक्षित तो उन झोंपड़ों में पहुँच गये हैं न?" अमरपाल ने पूछा ।

"हाँ, अमरपाल, हमारे सारे पक्षी सुरक्षित हैं और इस समय अपनी झोंपड़ियों में बँधे हैं । महाराजा नागवर्मा धवलगिरि पर आक्रमण करने गये हैं । इस समय कपिलपुर के रक्षक हम्हीं लोग हैं । दुर्ग में भी थोड़े से सैनिक रह गये हैं । वे

लोग भी, वास्तव में, दुर्ग की रक्षा के लिए नहीं, बल्कि राजकुमारी कांतिमती का पहरा देने के लिए रखे गये हैं। महाराजा नागवर्मा अपने साथ सारी सेनाएँ ले गये हैं। वे पहले धवलगिरि पर आक्रमण करेंगे, इसके बाद जंगल में स्थित चित्रसेन के क़िले पर अधिकार करके तब कपिलपुर लौटेंगे। समझ लो, इस विजय के बाद हममें से प्रत्येक व्यक्ति एक सामन्त राजा बन जायेगा।" पहरेदारों ने बड़े उत्साह के साथ अमरपाल को सारा विवरण विस्तार के साथ बता दिया।

पहरेदारों की बातें सुनकर अमरपाल बड़ी ज़ोर से खिलखिलाकर हँस पड़ा, मानो इस समाचार से उसे अपार हर्ष हुआ हो। इसके बाद वह उछल-कूद करता हुआ हाथों से कुछ संकेत करने लगा। दूसरे ही क्षण अमरपाल के अनुचर दौड़ते हुए आये और उन्होंने अचानक गर्जन करते हुए पहरेदारों पर हमला बोल दिया। अमरपाल ने भी म्यान से अपनी तलवार खींच ली और उन पहरेदार ज्वालाद्वीपवासियों को गाजर-मूली की तरह काटने लगा। वे सभी पहरेदार निहत्थे थे, इसलिए देखते ही देखते मृत्यु का ग्रास बन गये।

इसके बाद अमरपाल अपने अनुचरों के साथ पहरेदारों के घरों में घुसा और तेल में भिगोये मशालों को जलाकर ताड़-पत्रों की बनी उन झोंपड़ियों में आग लगा दी, जिनमें वे भयंकर पक्षी बँधे हुए थे। हवा के कारण आग तुरन्त प्रज्वलित हो उठी और वे झोंपड़ियाँ आग की लपटों में घिर गयीं। लोहे की मज़बूत जंजीरों से बँधे वे भयंकर पक्षी अपनी चोंचों से जंजीरों को तोड़ने में सफल होगये थे, वे जलती देह के साथ ऊपर उठे, पर दूसरे ही क्षण छटपटाते हुए नीचे गिरे और मर गये।

अमरपाल को अपनी सफलता पर बेहद खुशी हुई। वह अपने अनुचरों के साथ नाचने-गाने लगा। उसी समय अकस्मात् एक पहाड़ी प्रदेश से भेरियों की आवाज़ें आने लगीं। उस ध्वनि को सुनकर अमरपाल उस दिशा में देखते हुए बोला, "महाराज चित्रसेन और उग्राक्ष सेनाओं के साथ आ रहे हैं। आग की लपटें देखकर उन्हें हमारी सफलता पर विश्वास हो गया है। अब हमें शीघ्र ही कपिलपुर पर अधिकार कर

लेना चाहिए। तुम लोगों में से दो व्यक्ति जाओ और महाराज चित्रसेन तथा उग्राक्ष को संदेश दो कि यहाँ का कार्य सफल हुआ है।"

अमरपाल के मुँह की बात अभी पूरी भी न हुई थी कि दो राक्षस अपनी पाषाणी गदाओं को घुमाते हुए झाड़ियों के ऊपर से कूद गये और जिधर से भेरियों की ध्वनि आयी थी, उस दिशा में भाग गये।

कुछ देर बाद चित्रसेन और उग्राक्ष सेनाओं के साथ वहाँ आ पहुँचे। अमरपाल ने अपने साथियों के साथ जो वीभत्स दृश्य वहाँ प्रस्तुत किया था, उसे उन लोगों ने प्रशंसा की दृष्टि से देखा। अब भी जहाँ-तहाँ लपटें उठ रही थीं। भयंकर पक्षियों को उनकी झोंपड़ियों-सहित भस्मीभूत देखकर उग्राक्ष उत्साह से भर उठा। वह अमरपाल के पास आया और उसके दोनों हाथ पकड़कर उसने उसे ऊपर उठा लिया, फिर उसे हवा में झुलाते हुए बोला, "वाह, अमरपाल, तुम सच्चे वीर हो! तुमने मेरे जंगल को दुश्मन के डर से मुक्त कर दिया, बोलो, तुम क्या चाहते हो?"

"तुम मुझे खुशी के मारे हवा में इस तरह झुला रहे हो कि उस तीव्रता से शायद मेरा कलेजा ही फट जाये। इसलिए तुम कृपा कर मुझे ज़मीन पर उतार दो। बस, इस समय तो मैं तुमसे यही चाहता हूँ।" अमरपाल ने हाँफते हुए उत्तर दिया।

उग्राक्ष ने अमरपल को ज़मीन पर उतार दिया, फिर उसकी पीठ थपथपाकर पूछा, "तुमने उन सभी पक्षियों को भस्मीभूत कर दिया है न? कोई बचा तो नहीं?"

"उन पक्षियों में से अब कोई भी नहीं बचा है पर यहाँ सिर्फ़ बीस लोग मारे गये हैं, जो उन पक्षियों के सवार भी थे और पहरेदार भी। जो शेष रह गये हैं, वे शायद कपिलपुर के दुर्ग में होंगे।" अमरपाल ने कहा।

"अब वे लोग बचकर कहाँ जायेंगे? हम अपनी सेनाओं के साथ दुर्ग को घेर लेंगे और उन लोगों को भी जलाकर मार डालेंगे।" यह कहकर उग्राक्ष ताल ठोंकने लगा।

"अगर हम दुर्ग में आग लगाते हैं तो राजकुमारी कांतिमती भी ख़तरे में पड़ सकती है। इसलिए उग्राक्ष, तुम दुर्ग पर क़ब्ज़ा करने का भार

मुझ पर छोड़ दो!" चित्रसेन ने कहा ।

"अरे हाँ, मैं राजकुमारी की बात तो बिलकुल भूल ही गया । सुनो, क़िले की हानि बिलकुल नहीं होनी चाहिए । तुम लोगों ने सुना?" यह कहकर उग्राक्ष ने अपने सेवकों पर तीक्ष्ण दृष्टि डाली ।

"महानायक, हमने आपकी बात सुन और समझ ली है ।" एक साथ सभी राक्षस चिल्ला उठे ।

इसके बाद अमरपाल के नेतृत्व में दस घुड़सवार भेद लेने के लिए कपिलपुर की ओर भेजे गये । बाकी लोग रसोई बनाने में लग गये ।

धीरे-धीरे सूरज पश्चिमी दिशा में ढलने लगा । सैनिक खाना खाकर पेड़ों की छाया में विश्राम करने लगे । उसी समय एक घुड़सवार वहाँ पहुँचा और चित्रसेन से बोला, "महाराज, ख़तरा पैदा होगया है । पचास-साठ बाघचर्मधारी लोग राजकुमारी को पालकी में कहीं जंगल की तरफ़ ले जा रहे हैं ।"

यह समाचार सुनकर चित्रसेन तथा उग्राक्ष चौंक पड़े । शायद भयंकर पक्षियों के जल जाने का समचार उन्हें मिल गया है । आग की लपटों और धुएं के बादलों से वे सब समझ गये होंगे और यह सोचकर उन्होंने कपिलपुर का दुर्ग छोड़ दिया होगा कि अब वह उनके लिए सुरक्षित स्थान नहीं है । इसीलिए वे राजकुमारी को किसी पहाड़ी गुफ़ा में छिपाने के लिए ले जा रहे होंगे ।

चित्रसेन ने अपने सैनिकों में से पचास वीर योद्धाओं को चुना और उग्राक्ष के अनुचरों में से भी कुछ लोगों को साथ लेकर राजकुमारी को मुक्त करने के लिए निकट के एक रास्ते से चल पड़ा । चित्रसेन ने बाक़ी सेना को अमरपाल के नेतृत्व में कपिलपुर के दुर्ग पर कब्ज़ा करने के लिए तुरन्त प्रयाण करने का आदेश दिया ।

भेद लेकर आया हुआ घुड़सवार चित्रसेन तथा उनके सैनिकों को रास्ता दिखाने लगा । वे बाघचर्मधारियों के हाथों से राजकुमारी को मुक्त करने के लिए तीव्र गति से चल पड़े । कुछ ही देर में वे लोग उस रास्ते के निकट पहुँच गये, जहाँ से

बाघचर्मधारी गुज़रनेवाले थे। अभी कुछ ही क्षण बीते थे कि उन्होंने देखा कि चार कहार राजकुमारी की पालकी को ढो रहे हैं और पालकी के आगे-पीछे सशस्त्र बाघचर्मधारी चल रहे हैं।

बाघचर्मधारियों को नागवर्मा ने कपिलपुर पर आक्रमण करने के लिए जाने के पूर्व यह आदेश दे रखा था कि अगर किसी कारणवश दुश्मन भयंकर पक्षियों का वध करे और उनके पहरेदारों को पराज़ित करे तो ऐसी हालत में राजकुमारी दुश्मन के हाथों में न पड़े।

नागवर्मा के इसी आदेश का पालन करने के विचार से उसके कुछ विश्वस्त अनुचरों ने यह भांप लिया कि अब भयंकर पक्षियों तथा उनके पहरेदारों का संहार हो चुका है। इसलिए उनके महानायक के आदेश का पालन करना चाहिए।

यही निश्चय करके नागवर्मा के कुछ प्रमुख अनुचरों ने राजकुमारी कांतिमती को पालकी पर बिगाया और उसको सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने के लिए ले जा रहे थे। वे यह निश्चय कर चुके थे कि अपने प्राणों की बलि देकर भी राजकुमारी कांतिमती की रक्षा करनी चाहिए। पर दुर्भाग्य से अमरपाल ने उनको देख लिया। चित्रसेन को यह समाचार मिलते ही वह उनकी ओर बढ़ा।

चित्रसेन को अपने समीप पहँचते देख बाघचर्मधारी योद्धाओं के सरदार ने गरजकर कहा, "सुनो, तुम लोग पालकी नीचे उतार दो!"

इसके बाद उसने अपने योद्धाओं को आदेश देकर कहा, "इस बात को याद रखना कि जब तक हमारे शरीर में प्राण हैं, राजकुमारी कांतिमती दुशमन के हाथों में न पड़ने पाये। हम लोगों में आख़िरी व्यक्ति जब यह समझ ले कि अब उसके मरने की घड़ी आगयी है, तब उसका फर्ज़ होगा कि वह राजकुमारी का संहार करके अपनी जान दे दे। यह मैं तुम सबको महाराजा नागवर्मा का आदेश बता रहा हूँ।"

(क्रमशः)

साहसी वीर

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाला और सदा की तरह मौन श्मशान की तरफ़ चलने लगे। तब शव में वास करनेवाले बेताल ने पूछा, "राजन, जिसने आपको इस भयंकर श्मशान में अर्धरात्रि के समय इस असाधारण कार्य को साधने के लिए प्रेरित किया है, वह आपसे कहीं अधिक बलवान और बुद्धिमान होना चाहिए। इस संसार में कुछ लेग ऐसे होते हैं जो अत्यन्त अधम कोटि के व्यक्ति को भी इसलिए प्रसन्न करते हैं क्योंकि वह बहुत अधिक बलवान है और उसे रुष्ट करने पर उन्हें अपने प्राणों की बलि देनी पड़ सकती है। इतना ही नहीं, अगर उनके हाथ में हो तो वे उसे कोई ओहदा भी दे बैठते हैं। पर ऐसे लोगों में कोई अपवाद भी होता है, जो उस अधम व्यक्ति को चुनौती देता है। मैं आपको ऐसे ही एक वीर राजा चतुरसेन की कहानी सुनाता हूँ, श्रम को भुलाने के लिए सुनिये!"

बेताल कथा

बेताल कहानी सुनाने लगाः

एक समय की बात है, जब चतुरसेन नाम के राजा अन्य अनेक राजाओं को पराजित कर चक्रवर्ती सम्राट कहलाये। सम्राट चतुरसेन ने जिन देशों को जीता था, उनमें उन्होंने समर्थ शासन-व्यवस्था कायम की और अच्छा यश प्राप्त किया। उनकी योग्यता ऐसी थी कि साम्राज्य में सर्वत्र शांति का राज्य था, कहीं युद्ध का भय नहीं रहा। सम्राट-चतुरसेन की राजधानी श्रीरंगपट्टण थी।

एक दिन महाराजा चतुरसेन को यह सूचना मिली कि युद्ध का भय न होने के कारण देश के सभी युवकों में ललित-कलाओं और ऐसे ही अन्य कार्यों के प्रति आकर्षण बढ़ रहा है। उन्होंने सोचा कि देश का युवावर्ग युद्ध-विद्याओं की उपेक्षा करे, यह हितकर नहीं है। इसी बात को ध्यान में रखकर उन्होंने श्रीरंगपट्टण में शस्त्रास्त्र विद्याओं की प्रतियोगिताओं का प्रबन्ध किया। इन प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए अनेक प्रदेशों के युवक उत्साह पूर्वक राजधानी में आये। उनके ठहरने के लिए नगर के परिसर में शिविर बनाये गये।

प्रतियोगिताओं का आरंभ होने में अभी दो दिन शेष थे कि श्रीरंगपट्टण में अचानक एक राक्षस आ धमका। ताड़ की ऊँचाई का वह राक्षस नगर के मध्य भाग में खड़ा होकर गरज कर राजा को पुकारने लगा। महान शूरवीर और पराक्रमी चक्रवर्ती राजा चतुरसेन भी उस भयंकर रूप वाले राक्षस को देखकर भयभीत होगये।

"राजन, अगर मैं चाहूँ तो अपने पैर की मामूली ठोकर से इस पूरे नगर को खंडहर बना सकता हूँ। पर मैं ऐसा नहीं करना चाहता। पर मेरी एक शर्त है। तुम उसे पूरा करने को तैयार हो? मेरी शर्त सुनो— मैं प्रतिदिन इसी समय यहाँ पर आया करूँगा। तुम्हें मुझे प्रतिदिन दो बलिष्ठ एवं स्वस्थ युवकों को मेरे आहार के लिए अर्पित करना होगा। मैं उन्हें खाकर संतुष्ट हो जाँऊगा और अन्य कोई हानि नहीं पहुँचाऊँगा।" राक्षस बोला।

चतुरसेन के सामने अभी और कोई विकल्प नहीं था। उन्होंने राक्षस की शर्त स्वीकार कर ली। उस दिन वह महाकाय राक्षस दो बलिष्ठ युवकों

को लेकर राजधानी से चला गया ।

राक्षस के चले जाने के बाद महाराजा चतुरसेन ने अपने मंत्रियों को बुला भेजा । सबने मिलकर इस घटना पर विचार-विमर्श किया । इस समस्या का हल क्या हो सकता है? अन्त में सब एक निर्णय पर पहुँचे और सारे देश में इस आशय का ढिंढोरा पिटवाया गया—"पहली घोषणा के अनुसार शस्त्रास्त्र-विद्याओं की प्रतियोगिताएँ अब नहीं चलायी जायेंगी, लेकिन जो वीर हमारी राजधानी में संकट उपस्थित करनेवाले इस राक्षस का वध करेगा, महाराजा चतुरसेन उसका अभूतपूर्व सम्मान करेंगे । उसे अनेक पुरस्कार दिये जायेंगे ।"

यह ढिंढोरा सुनकर शिविरों में ठहरे हुए कुछ युवक महाराजा चतुरसेन से मिले और उनसे निवेदन किया, "सम्राट, उस राक्षस की शक्ति अपार है । वह बरगद के विशाल वृक्ष को जड़-सहित उखाड़कर फेंक देता है, नदियों के जल को पीकर उनका पानी सुखा देता है । उस राक्षस का सामना करने के लिए युवकों को उत्तेजित करना कदापि हितकर नहीं है । नाहक वे अपने प्राण खो बैठेंगे ।"

उस राक्षस के बारे में कई युवकों को काफ़ी जानकारी थी । यह राक्षस हमेशा भ्रमण किया करता था और अब श्रीरंग पट्टण नगर में आया था ।

महाराजा चतुरसेन ने सबके समक्ष अपनी धर्म-संकट की स्थिति रखते हुए कहा, "मैं अपनी आँखों के सामने अपने प्राणों की बलि कैसे दे सकता हूँ?"

"महाराज, यह राक्षस कभी भी एक स्थान पर अधिक समय तक नहीं टिकता । इसके पैरों में चक्कर है । इसके द्वारा आपके राज्य में जो संकट उपस्थित हुआ है, वह तात्कालिक ही है । नगर ध्वस्त होने से बच जाये और हज़ारों व्यक्तियों के जान-माल की रक्षा हो जाये, उसके लिए अगर कुछ व्यक्तियों के प्राणों की हानि उठानी पड़ती है, तो वह बहुत अधिक नहीं है । हमारे प्रदेशों में आपके द्वारा नियुक्त सामन्त राजाओं ने कुछ ऐसा ही किया था ।" युवकों ने राजा को पूरा विवरण दिया ।

राजा ने निराश होकर युवकों को भेज दिया

और वे स्वयं गहरी चिंता में डूब गये ।

दूसरे दिन भी राक्षस यथा समय राजधानी में आया और दो बलवान युवकों को लेकर चला गया ।

महाराज चतुरसेन अपनी असहाय हालत पर बहुत व्याकुल हुए । उन्होंने पुनः एक बार सभी मंत्रियों को बुलाया और उनके सामने अपना विचार प्रकट किया, "मैं अपनी प्रजा को इस प्रकार इस राक्षस के मुख का ग्रास नहीं बना सकता । आप लोग इस समस्या का कोई हल निकालें, वरना मैं स्वयं उस राक्षस का सामना करूँगा ।"

सम्राट चतुरसेन राक्षस के साथ युद्ध करे, इसका सीधा अर्थ था आत्महत्या करना । सारे मंत्री (गहरी) चिंता में पड़ गये । उन्होंने गंभीरता से विचार किया और महामांत्रिक सांबक को बुलवा भेजा ।

सांबक ने अंजन लगाकर मंत्रियों से कहा, "मैं राक्षस की शक्ति का अनुमान नहीं लगा पा रहा हूँ । मैं यहीं से अपनी मंत्रशक्ति के बल पर राक्षस के साथ लड़ूँगा । अगर मंत्रशक्ति अधिक प्रबल रही तो राक्षस मर जायेगा अथवा मैं अपने प्राणों से हाथ धो बैठूँगा ।"

उस रात मांत्रिक सांबक ने राक्षस पर अपनी मंत्रशक्ति का प्रयोग करने के लिए पूजागृह की सफ़ाई करवायी । इसके बाद उसने अल्पना में कमल का आकार बनाकर उसके अन्दर शक्ति की प्रतिमा की प्रतिष्ठा की और उसके समक्ष पद्मासन में बैठकर मंत्रोच्चारण आरंभ कर दिया ।

पर कुछ ही देर में मंत्रियों को यह खबर मिली कि मांत्रिक सांबक खून उगलकर मर गया है । दूसरे दिन राक्षस सदा की भाँति फिर नगर में आया और दो स्वस्थ युवकों को उठाकर ले गया। महाराजा चतुरसेन का मन अत्यन्त व्याकुल हो उठा ।

मंत्रियों ने पुनः विचार-विमर्श किया । इस बार उन लोगों ने राजवैद्य का आश्रय लिया, जो पूरे देश में "अपरधनवन्तरि" नाम से विख्यात थे। उन्होंने राजवैद्य से पूछा, "वैद्यराज, आपको प्राणों को बचानेवाली औषधियों के साथ-साथ प्राणों को नष्ट करनेवाले विषों का ज्ञान भी अवश्य होगा । क्या विष के प्रयोग से राक्षस की

हत्या की जा सकती है?''

''महान बलवान को कुछ ही क्षणों में मार दे, ऐसे कालकूट विष का ज्ञान है मुझे।'' राजवैद्य ने उत्तर दिया।

''क्या उस विष के प्रयोग से राक्षस मर सकता है?'' मंत्रियों ने जिज्ञासा प्रकट की।

राजवैद्य मुस्कराकर बोला, ''यदि उस विष के प्रयोग के बाद भी कोई प्राणी जीवित रह जाता है तो संसार में ऐसा कोई दूसरा विष नहीं है जो उस प्राणी के प्राणों का हरण कर सके।''

उसी रात राजवैद्य ने कालकूट विष को विधिपूर्वक तैयार किया और मंत्रियों के हाथों में सौंप दिया। दूसरे दिन जो दो युवक राक्षस का आहार बननेवाले थे, मंत्रियों ने वह विष उन्हें सौंप कर कहा, ''तुम दोनों इस विष को अपनी मुट्ठियों में बन्द रखना। राक्षस जब तुम्हारा भक्षण करेगा, तब यह विष भी तुम्हारे साथ उसके शरीर में प्रविष्ट होना चाहिए। तुम्हारा मरण तो निश्चय है, किन्तु उस राक्षस के वध का श्रेय तुम्हें प्राप्त होगा। जब तक सूर्य और चंद्र रहेंगे, तब तक संसार तुम्हारा यशगान करता रहेगा।''

राक्षस दूसरे दिन सदा की भाँति आया और उन दो नियत बलशाली युवकों को उठा ले गया। उनके साथ उसके पेट में वह विष भी चला गया। पर, इस विष से उसकी कोई हानि नहीं हुई। इसके बाद दूसरे दिन भी उसने अपना नियम पूरा किया।

महाराजा चतुरसेन ने अपनी महारानी, अन्य सम्बन्धियों, मंत्रियों एवं विशिष्ट नागरिकों को एक स्थल पर एकत्रित कर कहा, ''आप सब सुनें! मैं

संहार करने पर ही मैं सम्राट और चक्रवर्ती कहलाने का अधिकारी हूँ। अगर मैं राक्षस का वध कर देता हूँ तो अपने 'राजा' नाम को सार्थक करूँगा और अगर स्वयं उससे मारा जाता हूँ तो प्रजाओं के कष्ट को अपनी आँखों से देखने के दुर्भाग्य से मुक्ति प्राप्त करूँगा।"

दूसरे दिन राक्षस नियत समय पर आ पहुँचा। महाराजा चतुरसेन उसके सामने खड़े होकर बोले, "अरे अधम, क्या तू मुझे नहीं जानता? मैं अनेक देशों पर विजय प्राप्त कर चक्रवर्ती की उपाधि से सम्मानित सम्राट चतुरसेन हूँ। तुम मुझ पर अपना आधिपत्य जमाना चाहते हो? मैं तुमसे युद्ध करूँगा। अगर मुझे विजय मिली तो मेरी प्रजाएँ तुम्हारे अत्याचार से मुक्त हो जायेंगी और अगर तुम जीत गये तो यह राज्य तुम्हारा हो जायेगा।" यह कहकर महाराज चतुरसेन ने म्यान से अपनी तलवार निकाल ली।

राक्षस ने राजा चतुरसेन को बिल्ली के छोटे से बच्चे की तरह उठाकर अपनी हथेली पर रख लिया और व्यंगभरे स्वर में पूछा—"ओह, तो तुम मुझ पर विजय पाने की आशा करते हो?"

"लड़ना वीर का लक्षण है। जय-पराजय ईश्वर के अधीन है।" यह कहकर महाराजा चतुरसेन ने राक्षस की हथेली पर अपनी तलवार का वार किया।

राजा के वार से राक्षस को ऐसा अनुभव हुआ, मानो हथेली में छोटा-सा काँटा गड़ गया हो उसकी हथेली से खून बहने लगा, लेकिन

अनेक देश जीतकर चक्रवर्ती सम्राट के गौरव-पद तक पहुँचा हूँ। मैंने आज तक किसी के सामने अपना मस्तक नहीं झुकाया। लेकिन अब एक अधम राक्षस मुझे असहाय बनाकर मेरी प्रजा का भक्षण कर रहा है। उसका आतंक और उसकी स्वेच्छारिता को अगर मैं अब और सहन करता हूँ तो मुझे इस सिंहासन पर बैठने का अधिकार नहीं है। या तो मैं उसका संहार करूँगा, या स्वयं काल का ग्रास बन जाऊँगा।"

सबने राजा से विनती की, "महाराज, यह तो जान-बूझकर मृत्यु को गले लगाना है।" पर सम्राट चतुरसेन पर अब किसी की बात का कोई असर न हुआ।

उन्होंने उत्तर दिया, "ऐसे आततायी राक्षस का

राक्षस ने उसकी तनिक भी परवाह नहीं की। उसने राजा के हाथ से तलवार छीन कर दूर फेंक दी और बोला—"चक्रवर्ती राजन, मैं तुम्हारे इस अतिशय साहस से अत्यन्त प्रसन्न हूँ। इस पृथ्वी पर तुम्हारे सदृश्य साहसी वीर सचमुच कोई नहीं है। तुम सच्चे चक्रवर्ती हो! तुम्हें देखकर मैं बहुत प्रसन्न हूँ और अब इस देश को छोड़कर जा रहा हूँ।"

राक्षस की बात सुनकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने पूछा, " तुम वास्तव में कौन हो? मेरे देश में किसलिए आये हो? और अब यहाँ से क्यों जाना चाहते हो?"

राक्षस ने कहा, "मैं पाताल-लोक का निवासी हूँ। वहाँ मैंने समस्त विद्याओं में कुशलता प्राप्त की। उस लोक में मुझे पराजित कर सके, ऐसा कोई नहीं रहा। पाताल लोक के राजा ने मेरे पराक्रम को देखकर मुझे अपना सेनापति नियुक्त करना चाहा था। पर मेरी एक विवशता थी। जब तक मैं अपने से अधिक बल-पराक्रमवाले वीर का सामना नहीं कर लेता, तब तक मैं एक स्थान पर स्थिर नहीं रह सकता था। यह बात मैंने अपने राजा से कही तो उन्होंने कहा कि पृथ्वी-लोक में भ्रमण करते समय तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी। इसीलिए मैं पृथ्वी-लोक में घूम रहा हूँ। मैं अनेक देशों एवं नगरों में गया, पर कभी किसी ने मेरा सामना नहीं किया, मुझे युद्ध के लिए नहीं ललकारा। इतने वर्षों के बाद मैंने तुम्हारे रूप में एक ऐसे व्यक्ति को देखा, जो मुझसे अधिक साहसी और वीर है। मेरी विवशता अब समाप्त होगयी। अब मैं संतुष्ट होकर पाताल-लोक के

लिए प्रस्थान करता हूँ। वास्तव में तुम चक्रवर्ती राजा कहलाने योग्य हो! तुम पर तुम्हारी प्रजा गती कर सकती है। मैं तुम से इतना अधिक प्रभावित हूँ, कुछ कह नहीं सकता। अच्छी बात है, अब तुम मुझे विदा करो।" यह कहकर राक्षस ने राजा के साथ आलिंगन किया और लम्बे-लम्बे डग भरकर वहाँ से चला गया।

बेताल ने अपनी कहानी समाप्त कर विक्रमार्क से पूछा, "राजन, तलवार खींचकर आक्रमण करनेवाले महाराजा चतुरसेन को राक्षस ने सहज ही उठाकर अपनी हथेली पर रख लिया। राजा की दिग्विजयी तलवार का वार उसे एक मामूली काँटे की चुमन-सा प्रतीत हुआ। फिर राक्षस ने राजा चतुरसेन को अपने से अधिक साहसी वीर क्यों कहा? इसका समाधान अगर आप जानकर भी नहीं देंगे तो आपका सिर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "पाताल-लोक के राजा ने राक्षस के पराक्रम से प्रसन्न होकर उसे अपना सेनापति नियुक्त करना चाहा था। इससे पता लगता है कि वहाँ के राजा का बल-पराक्रम राक्षस से अधिक था। अगर ऐसा न होता तो राक्षस सहज ही उसे पराजित कर स्वंय पाताल-लोक का रजा बन बैठता। इससे यह भी पता लगता है कि राक्षस में अपने से अधिक शूरवीर व्यक्ति का सामना करने की शक्ति नहीं है महाराजा चतुरसेन में यह क्षमता बहुत अधिक है। वे जानते हैं कि राक्षस सभी दृष्टियों से उनसे अधिक वीर और बलवान है। फिर भी, वे उसका सामना करते हैं। यही सच्चे वीर का लक्षण है। अपनी शक्ति के अनुरूप व्यक्ति के साथ लड़नेवाला व्यक्ति साधारण वीर है। किन्तु, जो अपनी शक्ति से अधिक शक्तिशाली के साथ लड़ने का साहस रखता है, वह साहसी वीर है। राक्षस ने यह सहज ही समझ लिया कि साहस में वह राजा चतुरसेन से बढ़कर नहीं हो सकता। इसलिए उसने उन्हें 'साहसी वीर' कहकर अभिनन्दित किया और वापस पाताल-लोक चला गया।"

राजा के इस प्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

चामुण्डेश्वरी

किसी काल में महिषासुर नाम का एक भयानक दानव अत्यन्त शक्तिशाली हो उठा और स्वच्छन्द होकर तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हो उठा ।

देवताओं ने अनेक बार महिषासुर के साथ युद्ध किया, पर उन सभी युद्धों में महिषासुर ने ही विजय प्राप्त की । उसके दारुण कृत्यों से पृथ्वी कम्पित हो उठी । महिषासुर की उग्रता दिन-प्रतिदिन बढ़ती चली गयी और वह साधु-सज्जनों पर अनेक अत्याचार करने लगा ।

देवताओं ने विष्णु के पास जाकर प्रार्थना की कि वे उन्हें महिषासुर के आतंक से मुक्ति दें । विष्णु ने उन्हें एक विशिष्ट यज्ञ करने का आदेश दिया । देवताओं ने यज्ञ-कुण्ड के चतुर्दिक बैठकर प्रार्थनाएँ कीं और यज्ञ पूर्ण किया । यज्ञ के यथाविधि पूर्ण होते ही यज्ञकुण्ड में देवी दुर्गा प्रत्यक्ष हुईं ।

दुर्गादेवी को शिव ने अपना त्रिशूल प्रदान किया । इंद्र ने वज्रायुध दिया । अन्य देवताओं ने देवी को अनेक प्रकार के आयुध एवं शक्तियां प्रदान कीं । दुर्गादेवी उन सब आयुधों और शक्तियों को ग्रहण कर सिंहासनासीन हुईं और उन्होंने विन्ध्याचल की ओर प्रस्थान किया ।

महिषासुर ने दुर्गादेवी के असाधारण सौन्दर्य के बारे में सुना था । अवसर पाकर उसने दूर से ही देवी को देखा और इतने अद्‌भुत रूप पर मुग्ध होकर उनके पास समाचार भेजा कि वह उनके साथ विवाह करना चाहता है । दुर्गादेवी की अस्वीकृति पर महिषासुर क्रोधित हो उठा ।

महिषासुर की आज्ञा से उसके अनुचर चण्ड, मुण्ड एवं अन्य सेनानियों ने दुर्गादेवी का पीछा कर उन्हें बन्दी बनाना चाहा, लेकिन दुर्गादेवी ने उनका घात कर दिया । अन्त में, महिषासुर स्वयं उनसे युद्ध करने के लिए सामने आया । दुर्गादेवी ने लोक-कंटक बने महिषासुर का संहार करके जगत का कल्याण किया ।

महिषासुर का संहार करने के बाद दुर्गादेवी ने एक सुन्दर पहाड़ पर थोड़ी देर विश्राम किया। तब से यह पर्वत एक पवित्र तीर्थस्थल बन गया और चामुण्डी-पर्वत के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

मैसूर नगर से तेरह किलो मीटर की दूरी पर स्थित इस पर्वत पर लोकमाता दुर्गादेवी चामुण्डेश्वरी का मन्दिर शोभायमान है।

समुद्र-तल से ३,४८९ फुट की ऊँचाई पर विद्यमान इस शोभाशाली दिव्य क्षेत्र में पहुँचने के लिए एक हज़ार सीढ़ियों को पार करना पड़ता है। इसी चामुण्डेश्वरी पर्वत पर महाबलेश्वर नाम का शिवालय भी है।

पर्वत-शिखर तक जाने वाले मार्ग में एक अत्यन्त विशाल नन्दी की मूर्ति है। एक ही शिला में तराशी गयी इस नन्दी-मूर्ति के कंठ के चारों ओर तराशी गयी घंटियाँ दर्शकों को इस प्रकार आश्चर्य में डाल देती हैं, मानो उनका अलग से लोहे से निर्माण किया गया हो।

मंदिर में प्रतिष्ठित देवी की प्रतिमा स्वर्णिम सिंहासन पर विराजमान है और अत्यन्त आकर्षक है। मन्दिर के परिसर में सुन्दर प्राकृतिक दृश्य आँखों के लिए उत्सव का कार्य करते हैं।
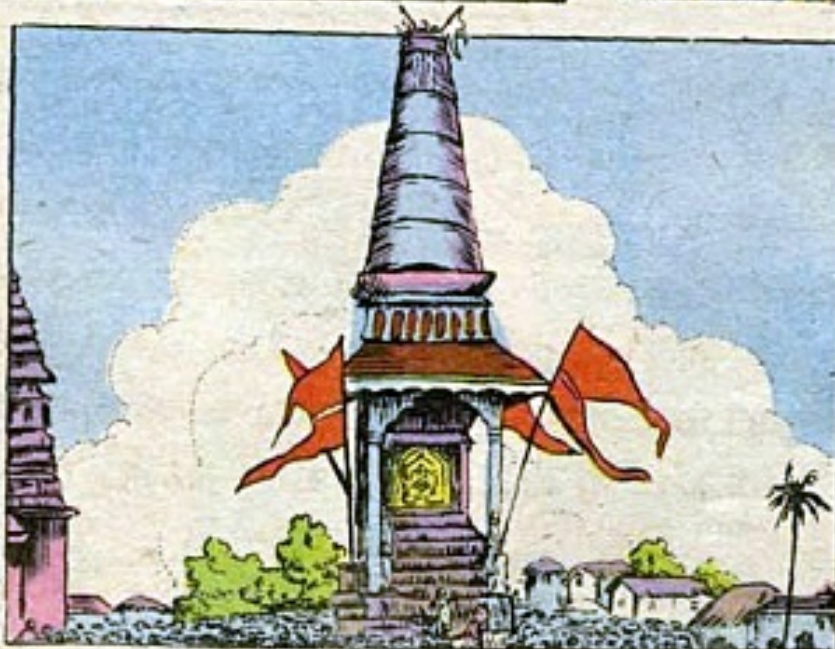
इस पर्वत-शिखर पर पहुँचने के लिए, प्राचीन काल में कोई सुविधा नहीं थी, फिर भी इस स्थान पर भक्तों की भीड़ लगी रहती थी। आज यहाँ आवागमन की अनेक सुविधाएं आसानी से प्राप्त हैं। यहाँ प्रति वर्ष देवी के नवरात्र-उत्सवों में भाग लेने के लिए देश के कोने-कोने से भारी संख्या में भक्तों का आगमन होता है।

पंच व्याघ्रशूर

सैंकड़ो वर्ष पूर्व चीन देश में च्यांग सिन नाम का एक निर्धन युवक रहता था। वह लकड़ी काट कर अपना और अपनी माँ का गुज़ारा करता था।

जाड़े का मौसम था। एक शाम वह ग़रीब लकड़हारा च्यांगसिन एक पहाड़ी घाटी में लकड़ी काट रहा था कि उस पास के बाँस के झुरमुटों में से कराहने की आवाज़ सुनाई दी। बाँस का झुरमुट बड़ा घना था, इसलिए च्यांगसिन यह नहीं देख पाया कि कौन कराह रहा है!

युवक च्यांगसिन ने कुल्हाड़ी कंधे पर रखी और वह बाँस के झुरमुट के निकट पहुँचा। पास आने पर कराहट की आवाज़ और स्पष्ट सुनाई देने लगी, लेकिन कराहनेवाला फिर भी दिखाई नहीं दिया। च्यांगसिन जंगली जीवन के बारे में जानता था, इसलिए उसने बड़ी सावधानी से झुरमुट के भीतर प्रवेश किया। उसने यह सावधानी इसलिए भी बरती, क्योंकि बाँस का यह झुरमुट पाँच वर्ष पहले काटा गया था। बाँस की कटी हुई जड़ें तलवार की धार से भी अधिक पैनी थीं, भूल से भी अगर उन पर पैर पड़ जाता तो पैर को चीर डालतीं।

च्यांगसिन धीरे से पैर रखकर झुरमुट के अन्दर पहुँचा तो उसे एक बाघिन दिखाई दी। उसके एक पैर में बाँस का टुकड़ा गहरा धँसा हुआ था। बाघिन हिलने-डुलने की स्थिति में भी नहीं थी और पीड़ा के कारण कराह रही थी।

च्यांगसिन की दृष्टि जैसे ही बाघिन पर पड़ी तो वह बहुत डर गया। लेकिन जब उसने देखा कि बाघिन घायल है और उसकी तरफ़ दयनीय दृष्टि से ताक रही है, तब उसका हृदय पिघल उठा।

इसके बाद च्यांगसिन झट बाँस के झुरमुट से बाहर निकला और पहाड़ उतरकर दौड़ता हुआ घर पहुँचा। उसने अपनी माँ से कहा, "माँ, पहाड़

चीन की लोक कथा

पर एक बाघिन घायल होकर पड़ी है। वह पीड़ा के कारण कराह रही है। तुम मदद करने के लिए मेरे साथ चलो! हम उसकी रक्षा करेंगे।"

"अच्छा बेटा, ऐसी बात है! क्षण भर रुको! मैं उस बाघिन के घावों पर मलने के लिए साथ में एक दवा ले लेती हूँ।" च्यांगसिन की माँ ने कहा।

कुछ देर में वे दोनों बाघिन के पास पहुँचे। च्यांगसिन की माँ ने बाघिन को कोमल शब्दों में सांत्वना दी। च्यांगसिन ने बड़ी युक्ति के साथ बाघिन के पैर को बाँस की नुकीली जड़ से बाहर खींच लिया। इस कष्ट से राहत पाने के बाद बाघिन ने उन दोनों माँ-बेटे की तरफ़ बड़ी कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि से देखा। माँ ने बाघिन के घाव पर दवा मल दी, फिर जल्दी से दो कदम पीछे हट गयी। च्यांगसिन की माँ का स्वभाव बड़ा नम्र था बाघिन से आदरपूर्वक विदा लेने का विचार करके वह औपचारिक रूप में बोली, "बाघिन माई, हम तो ग़रीब हैं। कोई भी गृहस्थ मेरे बेटे के साथ अपनी बेटी ब्याहने को तैयार नहीं है। तुम्हारी जानकारी में कोई अच्छी लड़की हो तो मेरे बेटे की शादी करवा दो। तुम्हारा पुण्य होगा।" यह कहकर च्यांगसिन की माँ अपने बेटे के साथ घर लौट गयी।

एक दिन एक धनवान ने अपनी बेटी सूयूँ को वधू-वेश में ससुराल के लिए विदा किया। दुलहिन बनी सूयूँ पालकी के भीतर बैठी हुई थी और पालकी के आगे-पीछे कुछ लोग सन्दूक एवं बहाँगियाँ उठाये चल रहे थे। सूयूँ की ससुराल का रास्ता उस पहाड़ी प्रदेश से होकर जाता था।

अभी सब लोग आधी दूर ही पहुँचे थे कि एक स्थान पर पाँच बाघों ने उनका रास्ता रोक लिया और वे पूँछें उठा तथा जबड़े खोल गुर्राने लगे। बहँगी, सन्दूक एवं पालकी ढोनेवाले कहार तथा अन्य लोग सब कुछ वहीं छोड़ भाग खड़े हुए। सूयूँ ने पालकी का द्वार खोला और घबराकर बाहर निकल आयी। उसने देखा कि वहाँ पाँच बाघों को छोड़कर अन्य कोई भी नहीं है।

बाघों ने सूयूँ को कुछ नहीं कहा।

थोड़ी देर बाद च्यांगसिन लकड़हारे के मकान पर किसी ने दस्तक दी। च्यांगसिन ने दरवाज़ा खोला तो देखता क्या है कि सामने एक सुन्दर

दुलहिन सजी हुई खड़ी है और उसके पीछे पाँच बाघ हैं। लकड़हारे को लगा कि बाघों के चेहरों पर मंद मुस्कान है। इसके बाद च्यांगसिन ने सूयूँ से शादी कर ली। सूयूँ अपने पति एवं सास के प्रति अत्यन्त आदरभाव रखती थी। उनका जीवन सुखपूर्वक व्यतीत होने लगा।

अभी कुछ ही दिन बीते थे कि सूयूँ के अमीर बाप को सारा समाचार मालूम हो गया। वह धनवान था। प्रतिष्ठित था। दूर-दूर तक उसका प्रभाव था। उसे यह गवारा नहीं हुआ कि उसकी बेटी एक लकड़हारे की पत्नी बने। उसने क्रुद्ध होकर च्यांगसिन और उसकी माँ के ख़िलाफ़ अदालत में नालिश कर दी कि इन दोनों ने मिलकर उसकी पुत्री का अपहरण किया है। न्यायाधीश ने च्यांगसिन और उसकी माँ को अदालत में बुलवाया।

च्यांगसिन ने अदालत में बताया कि उसने सूयूँ का अपहरण नहीं किया है, बल्कि उसे कुछ बाघ स्वयं ले आकर उसे उसके घर छोड़ गये हैं। न्यायाधीश ने च्यांगसिन की बात पर तनिक भी विश्वास नहीं किया। उसने अपने कर्मचारियों को आदेश दिया, "च्यांगसिन नाम के इस युवक को लाठियों से तब तक पीटो, जब तक कि यह अपना अपराध स्वीकार न कर ले। और अगर यह सच्ची बात कुबूल नहीं करता तो इसे मरने तक पीटो!"

च्यांगसिन की माँ न्यायाधीश के पैरों पर गिर पड़ी और गिड़गिड़ाकर बोली, "हुजूर, मेरा बेटा सच कहता है। आप चाहें तो मैं बाघों की गवाही दिला सकती हूँ।"
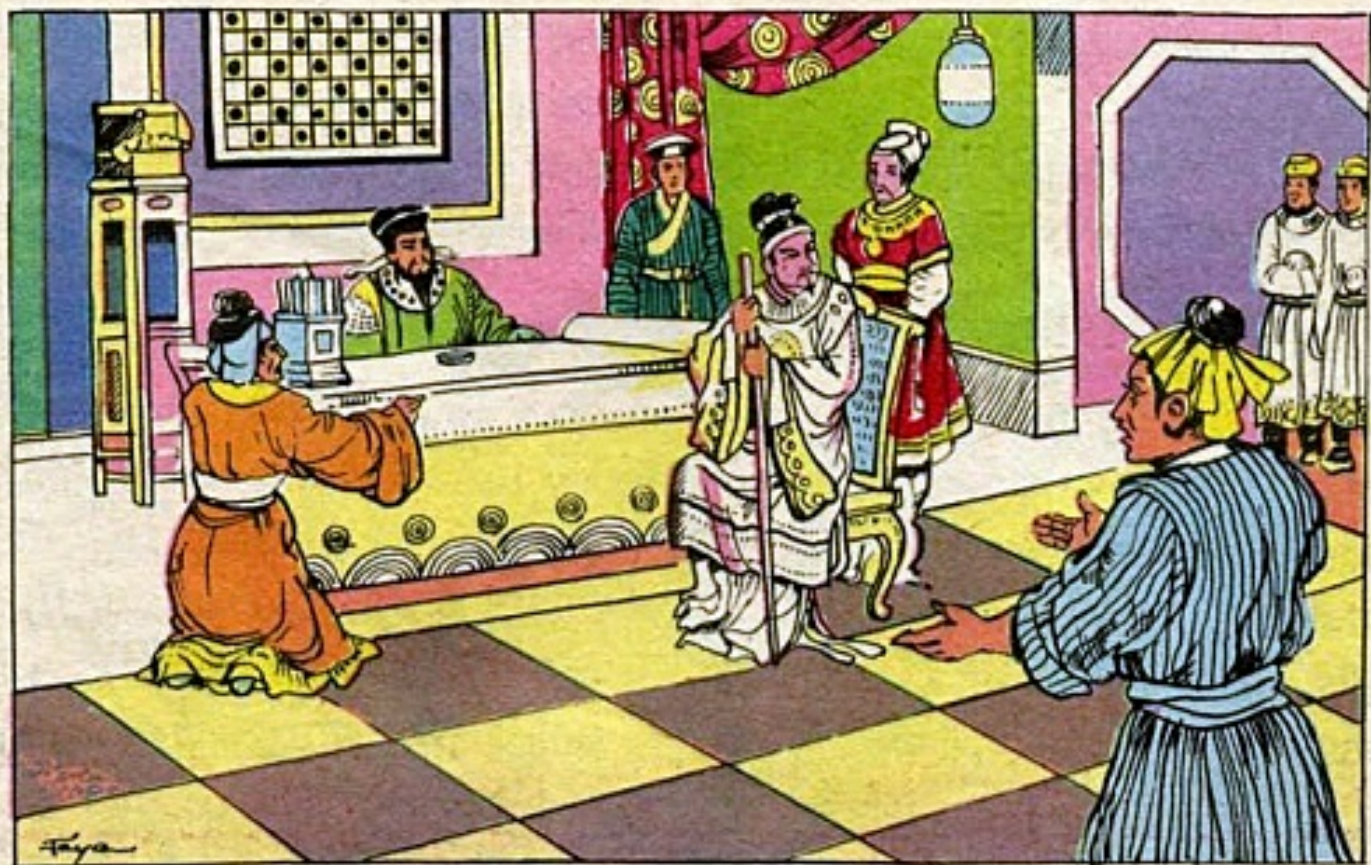
च्यांगसिन की माँ की बात पर न्यायाधीश को हँसी आगयी , पर उसने अपने को संयत कर उससे कहा, "तुम्हारी बात में कोई दम नहीं है। फिर भी मैं अपने लोगों को सज़ा अमल करने से रोक देता हूँ। तुम गवाहों को ले आओ!"

च्यांगसिन की माँ तुरन्त चली गयी और थोड़ी ही देर में लौट आयी। उसके पीछे पाँच बाघों को आते हुए देखकर अदालत के कर्मचारी भयभीत होकर भाग गये। न्यायाधीश स्वयं भी एक ऊँची मेज़ पर चढ़ गया और काँपते हुए स्वर में बाघों से बोला, "क्या तुम....?" इसके बाद उसके मुँह से बात नहीं निकली ।

न्यायाधीश का अधूरा सवाल सुनकर बाघों ने इस प्रकार स्वीकृति में अपना सिर हिलाया, मानो न्यायाधीश के प्रश्न को समझकर उत्तर दे रहे हों। न्यायाधीश ने च्यांगसिन के पक्ष में फैसला दे दिया और च्यांगसिन अपनी माँ के साथ घर लौट गया ।

उसी वर्ष ग्रीष्म-ऋतु में जंगल के हज़ारों निवासियों ने राज्य पर हमला कर दिया। जंगली लोगों का साथ उनके शिकरी कुत्ते, भालू और वानर थे । राजा की सेनाओं ने उनका सामना किया, पर उन जंगली जातियों की सेनाओं के सामने उनकी युद्ध-विद्याएँ विफल हो गयीं। ऐसा लगने लगा कि राजा की पराजय होनेवाली है। राजा को लगा कि सारी प्रतिष्ठा धूल में मिलने जा रही है। उसका सिर चकराने लगा। तभी किसी ने राजा को बताया कि च्यांगसिन नाम के एक लकड़हारे के पास कुछ बाघ हैं । राजा ने च्यांगसिन को बुलाकर कहा, "अगर तुम अपने बाघों की सहायता से दुशमन को भगा दोगे तो मैं तुम्हें अपना सेनापति नियुक्त करूँगा ।"

जंगली लोग महान योद्धाओं तथा कवच-शिरस्त्राणों को देखकर भयभीत न हुए थे, पर पाँच बाघों को देखते ही मैदान छोड़ भाग खड़े हुए। राजा के राज्य और राज-गौरव की रक्षा हुई। राजा ने पूरे विधि-विधान से च्यांगसिन को सेनापति-पद पर नियुक्त किया और उसे 'पंच व्याघ्रशूर' की उपाधि प्रदान की । च्यांगसिन राजसी ढंग से अपने परिवार के साथ रहने लगा।

उत्तर रामायण

कुबेर इस बार अपने दो मंत्रियों शुक्र और प्रोष्टपद को साथ लेकर रावण के पास आया और बोला, "अरे दुष्ट, तुमने मेरी बातों की अवहेलना की। अज्ञान के वशीभूत होकर तुम जो कार्य कर रहे हो, उसका दुष्परिणाम जब तुम्हारे सामने आयेगा, तभी वास्तव में तुम्हारे अन्दर ज्ञानोदय होगा। इस समय तुम अपने अज्ञान को समझ नहीं रहे हो। जब नरक का अनुभव करोगे, तभी तुम समझोगे। इसलिए तुमसे बात करना व्यर्थ है।"

इसके बाद उन दोनों भाइयों के बीच द्वन्द-युद्ध छिड़ गया। कुबेर ने रावण पर जिन अस्त्रों का प्रयोग किया, रावण ने उन्हें काट डाला और वह माया-युद्ध करने लगा। कुबेर को रावण के अनेक रूप दिखाई दिये, पर वह यह नहीं समझ सका कि इनमें वास्तविक रावण कौन है। ऐसे भ्रम की स्थिति में रावण ने कुबेर के सिर पर गदा का प्रहार करके उसे नीचे गिरा दिया। रक्त से नहाये कुबेर को निधियों के अधिदेवता नंदनवन में उठा ले गये और वहाँ उसका उपचार करने लगे।

इस प्रकार रावण ने कुबेर पर विजय प्राप्त कर उसका पुष्पक विमान ले लिया और उस पर आरूढ़ होकर शरवण-पर्वत पर चला गया। शरवण-पर्वत की शोभा अपूर्व थी। वह सूर्य की तरह देदीप्यमान और सुवर्ण की तरह चमकीला था। उस पर्वत पर पहँचते ही पुष्पक-विमान की गति अवरुद्ध हो गयी और वह आकाश में ही स्थिर खड़ा रह गया।

रावण विस्मय में आकर मन ही मन विचार

ऐसे ही अन्य प्राणियों को इस पर्वत पर आना वर्जित है ।"

नन्दी से ऐसी निषेधाज्ञा सुनकर रावण क्रोध में प्रमत्त हो उठा, ललकार बोला, "ये शिव कौन हैं?" फिर वह विमान से उतरकर पर्वत के नीचे चला आया ।

वहाँ से उसने देखा कि शिवजी एवं उनसे थोड़ी ही दूर पर त्रिशूल धारण किये द्वितीय शिव-रूप में दिखाई देनेवाले नन्दीश्वर विद्यमान हैं। नन्दीश्वर का वानरमुख देखकर रावण मेघ-गर्जन करता हुआ अट्टहास कर उठा ।

द्वितीय शिव-रूप में विद्यमान नन्दी ने रावण के परिहास पर कुपित होकर शाप दिया "रावण, तुमने मेरे वानर-मुख का परिहास किया है, मैं तुम्हें शाप देता हूँ कि इसी वानर-मुख को धारण करनेवाले शक्तिशाली वानरगण एक दिन तुम्हारा और तुम्हारे वंश का निश्चय ही सर्वनाश करेंगे ।"

रावण ने नन्दी की बात को अनसुनी कर दिया और फिर बड़ी लापरवाही के साथ पर्वत के समीप पहुँचकर नन्दी से बोला, "मेरे विमान को इस पर्वत ने रोक दिया है । मैं इस पर्वत को ही उखाड़ देता हूँ । शायद इसे ज्ञात नहीं है कि मैं अत्यन्त भयंकर और बलशाली राक्षस हूँ ।मेरे नाम से साहसी लोग भी कांप उठते हैं ।" यह कहकर रावण ने अपने हाथ पर्वत के नीचे धँसा दिये और उन पर उस पर्वत को उठाने का प्रयत्न करने लगा । पर्वत हिलकर ऊपर उठा ।

भगवान शिव ने भी इस दृश्य को देखा और

करने लगा, 'आख़िर क्या कारण है, विमान की गति को अवरुद्ध करने वाली शायद यहाँ पर कोई शक्ति हो । वरना अचानक यह यान क्यों रुक जाता । यह विमान तो संकल्प मात्र से ही उड़ सकता है । इस में यांत्रिक अवरोध भी तो नहीं हो सकता । देर तक माथा-पच्ची करने पर भी उसकी समझ में कुछ नहीं आया । तब पुष्पक विमान के रुकने का कारण जानने के लिए रावण ने अपने मंत्रियों से पूछा, "इच्छा शक्ति से उड़नेवाला यह विमान किसलिए रुक गया है?"

तब वहाँ आये भगवान शिव के पार्श्वचर एवं महाबली नन्दी ने रावण से कहा, "दशग्रीव, तुम तुरन्त वापस चले जाओ । इस पर्वत पर शिव क्रीड़ारत हैं । सुपर्ण, नाग, यक्ष, दैत्य, राक्षस एवं

मुस्कराकर अपने पैर के अंगूठे से पर्वत को थोड़ा-सा दबा दिया। भगवान शिव के इस दबाव से रावण के हाथ पहाड़ के नीचे फँसकर इस तरह दब गये कि पीड़ा न सह पाने के कारण रावण ज़ोर से कराह उठा। रावण की यह दशा देख उसके मंत्रियों को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने भगवान शिव की शक्ति समझकर रावण को सम्मति दी, "महाराज, आप भगवान शिव को संतुष्ट कीजिये। उनके अलावा और कोई आपकी सहायता नहीं कर सकता। आप कृपया अभी उनकी स्तुति कीजिये!"

अपने मंत्रियों का परामर्श मानकर पीड़ा से कराहते हुए रावण ने भक्तिपूर्वक शिव का स्तवन किया।

शिव ने रावण पर अनुग्रह किया। रावण ने अपने हाथों को पर्वत के नीचे से बाहर निकाल लिया। इस पर शिव ने मंदहास करके कहा, "तुम्हारी वीरता, अहंकार और स्तोत्र पर प्रसन्न हूँ। हाथों के दब जाने के कारण पीड़ा से तुमने जो दारुण ध्वनि की, उसके आधार पर भविष्य में तुम्हें 'रावण' नाम से पुकारा जायेगा। अब तुम जहाँ इच्छा हो, स्वेच्छापूर्वक जा सकते हो।"

"महादेव, अगर आप मुझसे प्रसन्न हैं, तो मेरी इस कामना को पूर्ण करने का अनुग्रह कीजिये। मैंने पहले यह वर प्राप्त किया था कि देवों के द्वारा मेरी मृत्यु न हो। मैं तुच्छ मानवों की परवाह नहीं करता। ब्रह्मदेव ने मुझे दीर्घायु प्रदान की है। मैं आपसे एक आयुध की कामना करता हूँ। आप मुझे कृपया वह शक्तिशाली आयुध प्रधान कीजियें!"

भगवान शिव ने रावण को 'चंद्रहास' नाम का खड्ग प्रदान करके कहा, "रावण, तुम अच्छी तरह याद रखो, तुम कभी भी इस अस्त्र का अपमान मत करना। अगर कभी इस अस्त्र का अपमान हुआ, तो यह उसी क्षण मेरे पास लौट आयेगा।"

शिव से ऐसा दिव्य अस्त्र प्राप्त कर रावण और भी उन्मत्त हो उठा और पुष्पक विमान पर आरूढ़ होकर सारी पृथ्वी पर विचरण करता हुआ वीर राजाओं को संत्रास देने लगा। अनेक पराक्रमी तथा शूर वीर राजा रावण के साथ युद्ध करके काल के ग्रास बने। जो विवेकशील थे, वे

और विवेक होता तो तुम इस तरह की उथली बातें न करते! वास्तव में तुम मोहावेश में आ गये हो, इस का फल कभी अच्छा नहीं होता । तुम अज्ञान में पड़ कर विष्णु की निन्दा करते हो। अब भी सही, तुम अपने को सुधारने का प्रयत्न करो। इसी में तुम्हारा कल्याण है ।'' वेदवती ने कहा।

इतना सुनना था कि रावण ने झपटकर वेदवती के केश पकड़ लिये । रावण के इस आचारण पर कुपित होकर वेदवती ने अपने हाथों ही छुरियों की तरह तीक्ष्ण बनाकर अपने केशों को काट डाला । वह अपनी क्रोधाग्नि से रावण को जला डालने के लिए तत्पर हो गयी ।

वेदवती ने अग्नि प्रज्वलित कर रावण को सम्बोधित कर कहा, "अरे नीच, तुझसे अपमानित होकर मैं अब जीवित नहीं रहना चाहती । मैं इस अग्नि में कूदकर अपने प्राणों की आहुति दूँगी। किन्तु, मेरी यह आहुति व्यर्थ नहीं जायेगी । तेरा संहार करने के लिए मैं अयोनिजा और पतिव्रता नारी के रूप में अवश्य जन्म धारण करूँगी।'' यह कहकर वेदवती आग में कूद पड़ी । इसी वेदवती ने सीता बनकर जन्म लिया और राजा जनक के यहाँ पलकर बड़ी हुई । भगवान विष्णु के अवतार रामचंद्र की पत्नी बनकर यह रावण की मुत्यु का कारण बनी ।

वेदवती के अग्नि में आहूत होने के बाद रावण पुस्पक विमान पर आरूढ़ हो पुनः जगत में संचरण करने लगा । वह एक दिवस उस स्थान पर पहुँचा, जहाँ राजा मरुत्त देवताओं को सम्मुख रख कर यज्ञ कर रहे थे । बृहस्पति के छोटे भाई संवर्त यज्ञ-विधि का संचालन कर रहे थे । उस समय वहाँ रावण को उपस्थित देख कर दिक्पालों ने भयभीत हो अपने रूप बदल लिये । अन्य देवताओं ने भी विविध जन्तुओं के रूप धारण किये ।

इसी बीच रावण ने यज्ञवाटिका में प्रवेश कर राजा मरुत्त से गरज कर पूछा, "बोलो, तुम मेरे साथ युद्ध करोगे या अपनी पराजय को स्वीकार करोगे?"

राजा मरुत्त ने रावण से पूछा, "तुम कौन हो? कहाँ के रहने वाले हो। पहले तुम अपना परिचय दो!"

रावण विकट अट्टहास करके बोला, "वाह,

तुम मुझ रावण को भी नहीं पहचानते? मैं नहीं समझता कि तीनों लोकों में कोई भी व्यक्ति मेरे बल-पराक्रम से अनजान हो सकता है? देखो, मेरा यह पुस्पक विमान! यह मैंने अपने बड़े भाई कुबेर को युद्ध में बुरी तरह से हराकर प्राप्त किया है ।"

रावण के धृष्ट वचन सुनकर मरुत्त क्रोध से काँप उठा और गरज कर बोला, "पितातुल्य बड़े भाई के साथ युद्ध करनेवाले तुम महान कैसे हो सकते हो? तुमने इतना बड़ा अपराध किया और ऊपर से अभिमान करते हो! थोड़ा ठहरो, मैं अभी अपने बाणों से तुम्हारे प्राण हरण करता हूँ।" यह कहकर राजा मरुत्त उसी समय उठ खडे हुए और उन्होंने अपने धनुष-बाण को हाथ में लिया ।

इस पर संवर्त ने राजा मरुत्त को रोककर कहा, "राजन, शीघ्रता मत कीजिये ! मेरी बात सुनिये! यह महेश्वर-यज्ञ बीच में रुक गया तो वंश का नाश हो जायेगा । आप इस समय यज्ञ में दीक्षित हैं । ऐसी स्थिति में क्रोध करना उचित नहीं है । इसके अलावा, आपके लिए युद्ध में इस राक्षस को पराजित करना संभव नहीं है । यह दुर्जय व्यक्ति है ।"

अपने गुरु के परामर्श को स्वीकार कर राजा मरुत्त ने धनुष और बाण रख दिये और पुनः यज्ञ-शाला में बैठ गये । यह देखकर रावण का मंत्री शुक्र प्रसन्नता के कारण उच्च स्वर में बोला, "विजय रावण की ही है ।" इसके बाद रावण यज्ञवाटिका में उपास्थित ऋषियों का भक्षण कर सन्तुष्ट हुआ और अपने रास्ते चला गया ।

इसके बाद दिक्पालों ने अपना निजी रूप धारण किया और उन-उन रूपों को वरदान दिया, जिन रूपों को उन्होंने उस वक्त धारण किया था ।

उस काल तक मयूरों का रंग श्याम होता था । इंद्र ने उन्हें सर्प-भय से मुक्त रहने तथा इंद्र द्वारा होनेवाली वर्षा से आह्लाद प्राप्त करने का वरदान दिया ।

इसी प्रकार यमराज ने कौओं को रोगमुक्त और आकास्मिक मृत्यु से मुक्त रहने का वरदान दिया । साथ ही यह वर भी दिया कि कौओं के भोजन-तृप्त होने से स्वर्गवासी पित्तर भी तृप्ति का अनुभव करेंगे ।

वरुण ने हंसों को फेन जैसी कांति, जल में विचरण एवं सुखप्रद जीवन प्रदान किया ।

कुबेर ने गिरगिटों को कनकवर्ण प्रदान किया।

इसके बाद रावण सारे जगत में संचरण करते हुए सारे राजाओं से वही प्रश्न बराबर करने लगा, जो उसने राजा मरुत्त से किया था—"तुम मेरे साथ युद्ध करोगे अथवा बिना युद्ध के ही अपनी पराजय और मेरी अधीनता स्वीकार करोगे?"

इस सन्दर्भ में दुष्यन्त, सुरथ, गाधी, गय और पुरूरवा आदि राजाओं ने अपनी पराजय स्वीकार कर ली। पर अयोध्या के महाराजा अनरण्य ने रावण को युद्ध के लिए ललकारा ।

इस युद्ध में अनरण्य की सेनाएँ इस प्रकार मृत्यु को प्राप्त हुईं, जैसे दावानल में दीमक जल जाती हैं। द्वन्द-युद्ध में रावण पर अनरण्य के बाणों का कोई प्रभाव नहीं हुआ । रावण ने अनरण्य के सिर पर हथेली से प्रहार किया । अनरण्य रथ से नीचे गिर पड़ा और उसने दम तोड़ दिया। मरने के पहले उसने रावण को शाप दिया, "मेरे इक्ष्वाकुवंश में जन्मे एक राजपुत्र के हाथों निश्चय ही तुम्हारी मृत्यु होगी ।"

रावण मानव-जाति को संत्रस्त करता हुआ एक बार अपने विमान में गगन-विहार कर रहा था कि उसके पुस्पक विमान के सामने मेघों के बीच विचरण करते नारदमुनि आगये। दोनों ने कुछ देर रुककर वार्तालाप किया ।

रावण के अंहकार से नारद मुनि भली भाँति परिचित थे। उसके गर्व का दमन करने का मौका ढूँढ रहे थे। अब उन्हें एक अच्छा मौका हाथ लगा था। भला वे इससे क्यों चूकते? थोड़ी देर इधर-उधर की बातें करने के पश्चात नारद बोले. "रावण, मैं तुम्हारे बल और पराक्रम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। पर तुम्हारी एक बात मुझे पसन्द नहीं आयी। देवता चाहकर भी तुम्हारा संहार करने में असमर्थ हैं। इतना होते हुए भी तुम क्षुद्र मानवों पर अपना पराक्रम दिखाते हो ? मानव-जाति तो स्वयं ही अनेक प्रकार के रोगों से त्रस्त है, वृद्धावस्था एवं पल-पल उपस्थित होनेवाले अन्य अनेक प्रकार के कष्टों और संकटों से ग्रस्त है—ऐसी दीनावस्था को प्राप्त मानव-जाति से कोई वीर युद्ध करने के लिए तत्पर हो सकता है?

इन लोगों को तो यमराज ही मृत्यु का ग्रास बना देते हैं। क्या ही अच्छा हो कि तुम इस यमराज के साथ युद्ध करो और उसे मार डालो! तुम यमराज का संहार करके समस्त नरक-लोक पर विजय प्राप्त कर लोगे!"

"मुनिवर नारद, मैं सर्वप्रथम पाताल और फिर इसके बाद स्वर्गलोक पर विजय प्राप्त करके तीनों लोकों पर अपना आधिपत्य स्थापित करना चाहता हूँ। इसके बाद मैं समुद्र-मंथन कर अमृत प्राप्त करना चाहता हूँ।" रावण ने अपने मन की बात कही।

"रावण, यमलोक तो तुम्हारे पार्श्व में ही है। उसे छोड़कर तुम पहले अन्य लोकों को जीतने की बात करते हो? यह कैसी विडम्बना है? क्या तुम नहीं जानते? तुम अभी जिस मार्ग पर बढ़ रहे हो, वह यमलोक का ही रास्ता है।" नारद ने कहा।

रावण अट्टहास करके बोला, "नारद मुनि, आपका कहना सत्य है। यमलोक को बीच में छोड़कर दूसरे लोकों पर विजय प्राप्त करना कहाँ की बुद्धिमत्ता है? मैं अभी यमलोक को जाता हूँ। इसके पूर्व ही मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि मैं चारों दिक्पालों को पराजित करूँगा। पर अभी मैं यहाँ से सीधे यमलोक को ही जाता हूँ और समस्त प्राणियों को मृत्यु के भय से आतंकित रखनेवाले उस यमराज को ही-सबसे पहले मृत्यु का ग्रास बनाता हूँ।"

यह कहकर रावण ने नारदमुनि को प्रणाम किया और उनसे विदा लेकर अपने मंत्रियों के साथ यमलोक में जाने के लिए दक्षिण दिशा की ओर चल पड़ा।

नारदमुनि की समझ में न आया कि समस्त प्राणियों के प्राण लेनेवाले यमराज की मृत्यु कैसे हो सकती है? उनके मन में उस दृश्य को देखने का कुतूहल भी जाग्रत हुआ कि रावण आख़िर यमराज को कैसे ललकारता है और युद्ध में उसे कैसे पराजित करता है? यह बात उनकी समझ में न आई। इसलिए वे सारी घटना के अवलोकन के लिए स्वयं भी यमलोक की ओर चल पड़े।

ईमानदारी का फल

मयूरपुर गाँव में प्रेमनाथ नाम का एक गरीब लड़का रहता था। उसके जन्म के कुछ ही देर बाद उसकी माँ की मृत्यु हो गयी थी और जब वह पाँच साल का था, तब उसका बाप साँप काटने से मर गया था।

प्रेमनाथ अभी बालक ही था, पर उसे भाग्यहीन मानकर उसके किसी रिश्तेदार ने उसे अपने घर में आश्रय नहीं दिया। फिर भी गाँववाले उसे अनाथ मानकर दया करके कुछ खाना दे देते, उसी पर पलकर प्रेमनाथ बड़ा होने लगा।

प्रेमनाथ शुरू से ही बड़ा फुर्तीला था। वह ख़ाली नहीं बैठकर यथाशक्ति लोगों के कामों में हाथ बँटा दिया करता था।

प्रेमनाथ की चुस्ती देखकर गाँववाले उससे प्रसन्न थे। पहले वे उसे अनाथ समझकर खाना देते थे, अब उससे काम कराकर उसे पारिश्रमिक के रूप में देने लगे।

कई साल निकल गये। प्रेमनाथ एक सबल युवक हो गया। मयूरपुर के सरपंच का नाम था धर्मदास। प्रेमनाथ ने उन्हें अनेक प्रसंगों में मदद पहुँचायी थी। इसलिए प्रेमनाथ के लिए धर्मदास के मन में एक विशेष अपनत्व और सहानुभूति की भावना थी। सरपंच धर्मदास ने सोचा कि कोई ऐसा उपाय निकाला जाये कि प्रेमनाथ स्वावलम्बी बन सके, अपने पैरों पर खड़ा हो सके।

एक दिन धर्मदास ने प्रेमनाथ को बुलाकर कहा, "प्रेमनाथ, मैं तुम्हारे आचरण और व्यवहार पर बहुत ही प्रसन्न हूँ। मेरी इच्छा है कि तुम स्वावलम्बी बनो। इसीलिए मैं तुम्हारी मदद करना चाहता हूँ। तुम मेरी पशुशाला से अपनी पसन्द की चार भैंसें चुन लो और दूध का व्यापार शुरू कर दो! उसकी आय से तुम आराम से अपना जीवन बिता सकते हो। जिस दिन तुम्हारे पास

यमुना दत्त तिवारी

पर्याप्त धन हो जाये, तुम मेरी भैंसों का मूल्य चुका सकते हो ।"

प्रेमनाथ ने धर्मदास के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और पशुशाला से चार दुधारू भैंसें हाँक ले गया । इसके बाद एक शुभ मुहूर्त में उसने अपना व्यापार शुरू कर दिया । वह गाढ़ा दूध कम दामों पर बेचने लगा ।

मयूरपुर में ही कलिंग नाम का दूध का एक और व्यापारी भी था । वह कम दूध में ज्यादा पानी मिलाकर बेचने में बड़ा निपुण था ।

एक दिन कलिंग ने प्रेमनाथ के पास आकर कहा, "सुनो भाई, हम लोग व्यापार करते हैं, दान-पुण्य नहीं । व्यापार का उद्देश्य लाभ प्राप्त करना है । अगर तुम गाढ़ा दूध कम दामों पर बेचोगे तो लाभ की बात तो दूर, पेट पालना भी मुश्किल हो जायेगा । ऐसी हालत में तुम सरपंच का पैसा कभी नहीं चुका पाओगे । मेरी सलाह मानो तो दूध में थोड़ा पानी मिलाओ और दाम भी कुछ अधिक रखो!"

"कलिंग भाई, आपका कहना सही है । पर यह गाँव मेरा है । यहाँ के सभी लोग मेरे अपने हैं । दूध में पानी मिलाकर बेचने का मतलब है अपने को धोखा देना । मैं तो ईमानदारी के साथ व्यापार करूँगा और जो कुछ मिलेगा, उसी में सन्तुष्ट रहूँगा । लेकिन मैं अपने गाँव वालों के साथ दगा नहीं करूँगा ।" प्रेमनाथ ने बड़ी दृढ़ता से अपना निश्चय प्रकट कर दिया ।

एक दिन क्षेमेंद्र नाम का एक गृहस्थ अपने चबूतरे पर बैठा हुआ था कि प्रेमनाथ उधर से गुज़रा । क्षेमेंद्र की बेटी के विवाह में प्रेमनाथ ने उसकी बड़ी मदद की थी ।

क्षेमेंद्र ने प्रेमनाथ को अपने पास बुलाकर पूछा, "बेटा, मैंने सुना है कि तुमने कोई व्यापार शुरू किया है! बताओ तो सही, तुम्हारा व्यापार कैसा चल रहा है?"

"बाबूजी, क्या बताऊँ? दूध बेचने से जो पैसे मिलते हैं, उससे कहीं अधिक भैंसों के चारे का खर्च आता है । मेरी समझ में नहीं आता कि क्या करूँ? इस प्रकार मैं ज्यादा दिन यह व्यापार नहीं चला सकता ।" प्रेमनाथ ने दुखी होकर कहा ।

"तो सुनो! मेरे मकान के सामने जो इतनी ख़ाली जगह पड़ी हुई है, उसमें तुम साग-सब-

ज़ीयाँ आदि पैदा करो! इससे तुम्हारे दिन आराम से गुजर सकते हैं। कल ही से यह धंधा शुरू करो।" क्षेमेंद्र ने प्रेमनाथ से कहा।

प्रेमनाथ को यह सलाह अच्छी लगी। उसने क्षेमेंद्र के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की, फिर धर्मदास से मिलकर क्षमा माँगते हुए बोला, "बाबूजी, दूध के व्यापार में कुछ बच नहीं रहा है इसलिए मैं आपकी भैंसों को वापस कर कोई अन्य धंधा शुरू कर रहा हूँ। आप बुरा न मानियेगा!"

इसके बाद प्रेमनाथ ने क्षेमेंद्र की ख़ाली जगह में अनेक तरह की तरकारियाँ उगाकर सब्ज़ी का व्यापार शुरू किया। वह तरकारियों में से सड़ी-गली चीज़ें अलग कर देता और ख़ालिस तरकारी ही बेचता, वह भी बहुत ही सस्ते दामों पर।

मयूरपुर में ही चक्रधर नाम का एक और सब्ज़ी का व्यापारी था। उसने प्रेमनाथ को समझाकर कहा, "प्रेमनाथ, तुम इतनी उमदा तरकारियाँ बेचते हो, इसलिए मेरी बात मानकर उन्हें अधिक दामों पर बेचो। व्यापार के लिए व्यापारिक दृष्टिकोण ही अपनाना चाहिए। अपने लाभ की बात भी सोचनी चाहिए। अगर तुम दाम कम रखना चाहते हो तो तरकारियों को छाँटे बिना एक ही दाम पर बेचो! वरना तुम्हारा गुजारा कैसे होगा?"

चक्रधर की बात सुनकर प्रेमनाथ बोला, "चक्रधर भाई, मयूरपुर के लोगों ने मुझ अनाथ को प्यार और वात्सल्य से बड़ा किया है। इन लोगों ने मुझसे किसी प्रकार के लाभ की अपेक्षा
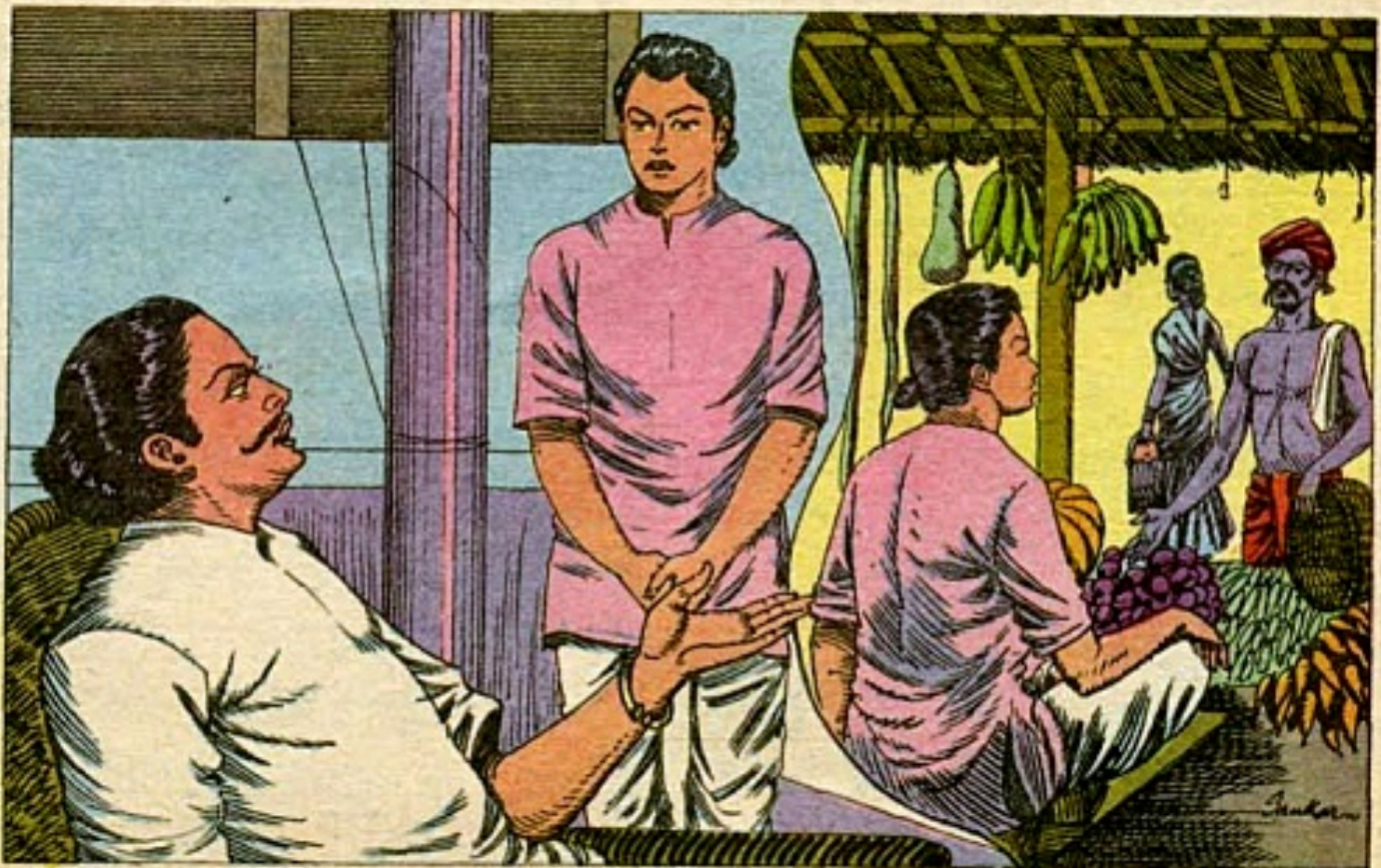
नहीं रखी। ऐसे दयालु लोगों से मैं लाभ कैसे ले सकता हूँ? मैं ईमानदार हूँ और ईमानदार ही रहना चाहता हूँ।"

प्रेमनाथ का सब्ज़ी का व्यापार भी लाभदायक सिद्ध नहीं हुआ।

उन्हीं दिनों प्रेमनाथ की मुलाक़ात मयूरपुर के ही फूल-व्यापारी रमापति से हुई। रमापति ने प्रेमनाथ से कहा, "बेटा, मैं वृद्ध हो चुका हूँ। अब मैं फूलों का व्यापार चला नहीं पा रहा हूँ। मेरे चारों बेटे दूसरे व्यापारों में लगे हुए हैं और काफ़ी धन कमा रहे हैं। तुम भी मेरे लिए बेटे के ही समान हो। अगर तुम्हें इस व्यापार में रुचि हो तो मैं यह व्यापार तुम्हें सौंपना चाहता हूँ।"

रमापति की सलाह मानकर प्रेमनाथ ने सब्ज़ी का व्यापार छोड़कर फूलों का व्यापार शुरू किया। वह सूखे और कुम्हलाये फूलों को छाँट देता और ताज़ा एवं खिले हुए फूलों की मालाएँ बनाकर बेचता।

यह देख रमापति ने एक दिन प्रेमनाथ को समझाने की कोशिश की और कहा, "देखो बेटा, तुम जिस ढ़ंग से फूलों का धंधा कर रहे हो, उससे तुम्हें बिलकुल लाभ नहीं होगा। फूलों को छाँटो मत! सभी फूलों को मिलाकर माला गूँथो। माला गूँथते समय फूलों के बीच थोड़ा अन्तर भी रखो!"

प्रेमनाथ ने तुरन्त जवाब दिया, "बाबूजी, मैं तो अकेला व्यक्ति हूँ। किसी तरह अपना पेट पाल सकता हूँ। मैं अपने हितैषी गाँववालों को धोखा नहीं दे सकता।"

इसके बाद कुछ दिन और निकल गये। प्रेमनाथ को फूलों के व्यापार में भी कोई लाभ न मिला। यह बात ज्ञानगुप्त नाम के एक प्रमुख व्यापारी ने वृद्ध रमापति के मुँह से सुनी। ज्ञानगुप्त स्वयं प्रेमनाथ के पास गया और बोला, "बेटा, मैं इधर काफ़ी दिनों से तुम्हारे कार्य-कलापों पर नज़र रख रहा हूँ। मैं तुम्हारी ईमानदारी पर मुग्ध हूँ। मैं तुम्हें अपना दामाद बनाना चाहता हूँ। अगर तुम्हें आपत्ति न हो तो मेरी बेटी शीला के साथ विवाह कर लो! मैं दहेज के रूप में तुम्हें अपनी एक परचून की दूकान भी दूँगा।"

प्रेमनाथ ने ज्ञानगुप्त का प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया। यह समाचार कलिंग, चक्रधर और

रमापति को भी मिला। वे समझ नहीं सके कि ज्ञानगुप्त जैसा प्रतिष्ठित व्यापारी अपनी बेटी का विवाह प्रेमनाथ के साथ क्यों कर रहा है।

आश्चर्य में भरकर वे तीनों ज्ञानगुप्त के पास पहुँचे। उन्होंने इस सुनी हुई ख़बर का हवाला दिया और ज्ञानगुप्त से पूछा, "क्या यह बात सच है? सब जानते हैं कि प्रेमनाथ व्यापार में दक्ष नहीं है और आपने जो दूकान उसके हाथ में सौंपी है, उसमें घाटा ही होना है। लाभ की तो कोई संभावना नहीं है। वैसे प्रेमनाथ बहुत ही ईमानदार और सज्जन लड़का है, लेकिन साथ ही वह एकदम भोला और सीधा भी है।"

उत्तर में ज्ञानगुप्त ने कहा, "आपने जो सुना, सच है। यह भी सच है कि प्रेमनाथ बहुत ही ईमानदार और सज्जन है, और भोला एवं सीधा भी हो सकता है, पर वह मूर्ख ज़रा भी नहीं। तुम लोग शीघ्र ही इस सच्चाई को जान जाओगे।"

ज्ञानगुप्त की बेटी शीला के साथ प्रेमनाथ का विवाह बड़े सुन्दर ढ़ंग से संपन्न हो गया। प्रेमनाथ ने परचून की दूकान पर बैठना शुरू कर दिया। मयूरपुर के लोग प्रेमनाथ की ईमानदारी से भलीभाँति परिचित थे। इसलिए वे अपने घर की आवश्यक चीज़ें उसी की दूकान से ख़रीदते थे।

धीरे-धीरे प्रेमनाथ को व्यापार में घाटा होने लगा। इस बीच उसके एक बेटा भी हो गया था। व्यापार में अपने दामाद को घाटा होते देख ज्ञानगुप्त ने उसकी कोई मदद नहीं की।

पर प्रेमनाथ की पत्नी शीला ने व्यापार में और अधिक पूंजी लगाने के लिए अपने सारे गहने उतार कर अपने पति के हाथ में रख दिये और
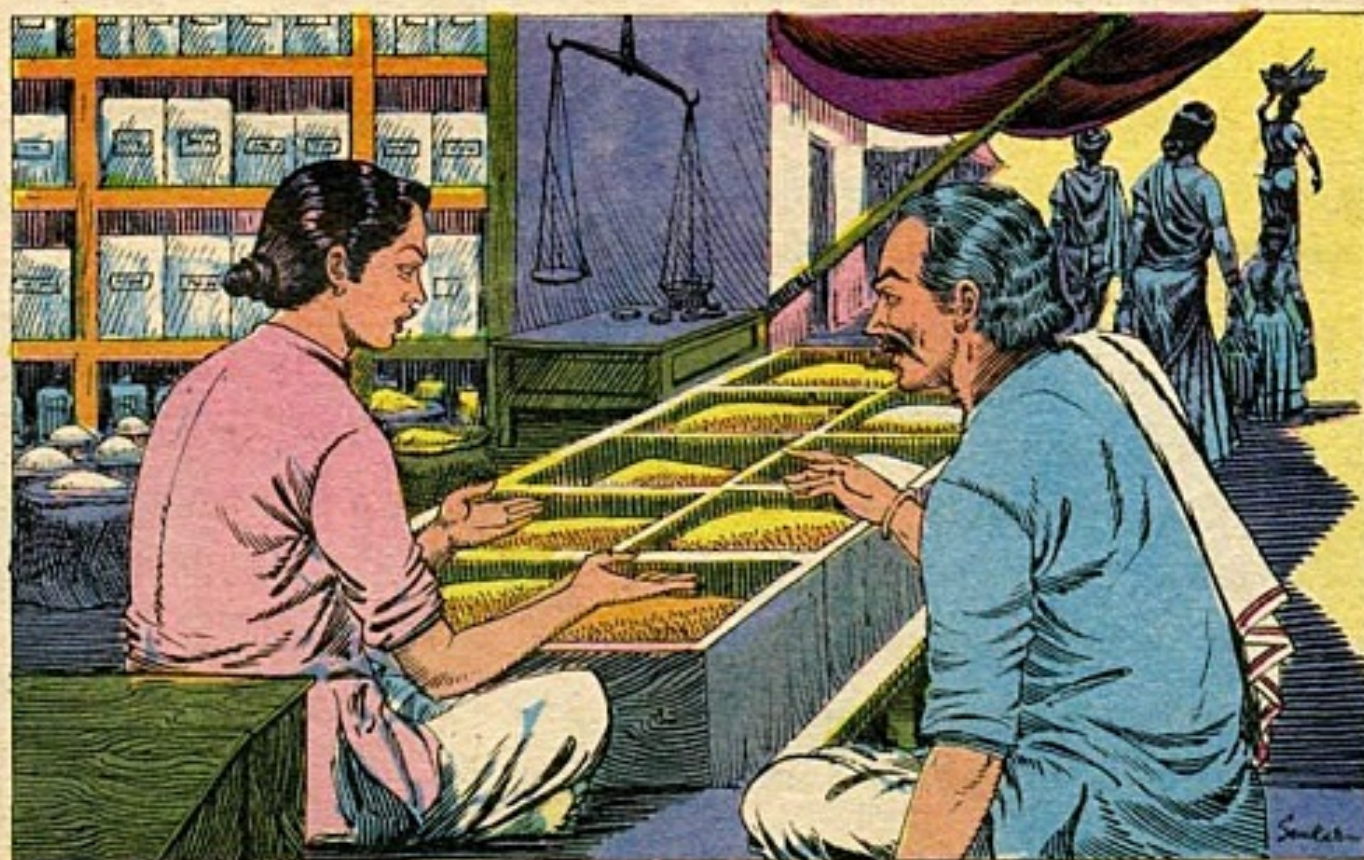
कहा, "मेरे पिताजी की ओर से अब आपको किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलेगी। इसके पहले आप अकेले थे, अब मुन्ना को मिलाकर हम तीन प्राणी हैं। मैं आपसे केवल इतना ही कहना चाहती हूँ कि ईमानदार व्यक्ति भी व्यापार में लाभ कमा सकता है। पर, इतना अवश्य है कि दूसरों के हित की बात सोचते समय अपने हित को भी याद रखा जाये। ऐसा न होने पर अवश्य नुक़सान होगा।"

अपनी पत्नी शीला के मुँह से यह बात सुनकर प्रेमनाथ को थोड़ा अचरज हुआ। उसने पूछा, "क्या तुम यह चाहती हो कि मैं अपना स्वार्थ साधने के लिए दूसरों के हित की बात भूल जाऊँ? तब व्यापार में मेरी ईमानदारी के लिए क्या गुंजाइश रह जायेगी?"

घर में प्रवेश करते समय ज्ञान गुप्त के कानों में अपनी लड़की-दामाद की बातें पड़ीं। ज्ञानगुप्त ने प्रेमनाथ से कहा, "बेटे, शीला का यह मतलब नहीं है कि तुम ईमानदारी छोड़ दो और स्वार्थी बन जाओ। व्यापार में लाभ कमाने का मतलब यह नहीं है कि मिलावट और तौल में धोखा आवश्यक है। पर व्यापार करते समय लाभ की बात को भुला देना ज़रा भी अक्लमंदी नहीं है। तुम वस्तुओं में अपने लाभांश को जोड़े बग़ैर व्यापार करते हो। आगे से जो चीज़ ख़रीदो, उसमें अपना लाभ जोड़कर उसे बेचो। यह बेईमानी नहीं। तब देखो, तुम्हारा व्यापार कैसा चमकता है?"

ससुर ज्ञानगुप्त की बात प्रेमनाथ के अन्दर उतर गयी। ज्ञानगुप्त ने व्यापार बढ़ाने के लिए प्रेमनाथ को कुछ धन भी दे दिया।

प्रेमनाथ दूसरे व्यापारियों की तरह अधिक लालच में तो न पड़ा, लेकिन थोड़ा लाभ रखकर अपनी चीज़ों को बेचने लगा।

अन्य व्यापारियों की तुलना में प्रेमनाथ की दूकान की चीज़ें सस्ती भी थीं और अच्छी भी थीं। इसलिए उसकी बिक्री सबसे अधिक होती थी। कुछ ही वर्षों में प्रेमनाथ मयूरपुर का ही नहीं, बल्कि आसपास के प्रमुख व्यापारियों में गिना जाने लगा।

सौ सिक्के

पूर्णनगर के राजा आदित्यसेन के दरबार में अनेक राज्याधिकारी थे। वे लोग समय-असमय राजा को खुश करने के लिए उनकी खुशामद किया करते थे और झूठी प्रशंसा से उन्हें उबा देते थे।

एक रात राजा आदित्यसेन अपने महल से निकल पड़े। उनके मन में यह इच्छा थी कि कहीं कोई सच्चा, ईमानदार आदमी मिल जाये, जो दिखावे की मुख-स्तुति न करके सच्ची प्रशंसा करना जानता हो। राजा आदित्यसेन ने अपने पूरे शरीर पर शाल ओढ़ रखा था और वे एक गली से गुज़र रहे थे। उन्हें एक मकान के चबूतरे पर पैर समेट कर लेटा एक आदमी दिखाई दिया।

राजा ने उस आदमी के निकट जाकर पूछा, "सुनो भाई, क्या तुम्हें सर्दी नहीं लगती?"

"महाशय, मैंनें अपने शरीर पर फटा हुआ कंबल ओढ़ रखा है। सर्द हवा कंबल के एक तरफ़ के छेदों में से घुसती है और दूसरी तरफ़ के छेदों से निकल जाती है। लेकिन आपने जो शाल ओढ़ रखा है, अंगर उसमें एक बार ठंडी हवा घुस जाये तो फिर वह अन्दर ही रह जायेगी, बाहर नहीं निकल पायेगी। यही कारण है कि आपको सर्दी अधिक लग रही है, जबकि मैं उसे सहन कर ले रहा हूँ।" उस आदमी ने उत्तर दिया।

उस आदमी की व्यंग्योक्ति पर राजा को हँसी आ गयी। राजा ने उससे फिर पूछा, "सुनो, मैरे पास एक सौ सोने के सिक्के हैं। उनमें से बीस सिक्के मैं तुम्हें दिये देता हूँ। उन सिक्कों को पाकर क्या तुम मेरी यह तारीफ़ कर सकते हो कि मैं इस देश के राजा के तुल्य हूँ!"

"ओह, क्या केवल बीस सोने के सिक्कों के लिए? इतनी छोटी रक़म पर मैं आपकी इतनी भारी तारीफ़ नहीं कर सकता।" उस आदमी ने उत्तर दिया।

अबिद हुसेन

"मान लो, मैं अपने धन में से आधा तुम्हें दे दूँ, तब तो तुम मुझे राजा के तुल्य बता सकते हो न?" राजा ने पूछा ।

"महाशय, ऐसा होने पर तो हम दोनों समान रूप से धनवान हो जायेंगे । तब आपकी तारीफ़ करने का सवाल ही कहाँ उठता है?" उस ग़रीब आदमी ने कहा ।

यह उत्तर पाकर राजा आदित्यसेन को बड़ी प्रसन्नता हुई । उन्होंने सोचा कि अब वे आगे बढ़ें । धन के लालच में यह आदमी अवश्य ही उन्हें पुकारेगा । राजा कुछ दूर चले गये, लेकिन उस आदमी ने राजा को नहीं पुकारा । राजा फिर उस ग़रीब के पास लौट आये । राजा को अपने पास आया देखकर उस ग़रीब आदमी ने पूछा, "बाबूजी, ऐसा लगता है कि आप मुझसे फिर कुछ सवाल करने के लिए आये हैं?"

"सवाल करने के लिए नहीं भाई, मैं तुमसे अपनी प्रशंसा सुनने के लिए आया हूँ। मैंनें तुमसे कहा था न कि मेरे पास सोने के सौ सिक्के हैं!" राजा ने कहा ।

"जी हाँ, आपने कहा तो था!" वह आदमी बोला ।

"तो मैं तुम्हें सेने के ये सौ सिक्के देना चाहता हूँ। अब तो तुम मेरी प्रशंसा में यह कह सकते हो न,!" राजा ने पूछा ।

"बाबूजी, सोने के सारे सिक्के मेरे हो जाने के बाद मुझे आपकी प्रशंसा करने की आवश्यकता ही नहीं है । तब तो शायद, आपको ही अपनी ज़रूरत के लिए मेरी प्रशंसा करनी पड़ेगी ।" ग़रीब आदमी ने ठहाका मारकर उत्तर दिया ।

उसकी बात सुनकर राजा आदित्यसेन भी उसके स्वर में स्वर मिलाकर हँस पड़े ।

राजा आदित्यसेन ने समझ लिया कि वह आदमी न तो लालची है और न जल्दी झुक सकता है । उन्होंने उसे सौ सिक्के देकर अपना परिचय दिया और अपने अन्तरंग सलाहकार के रूप में उसे नियुक्त कर लिया ।

सारी घटना सुनने के बाद अन्य राजकर्मचारियो को भी अच्छा सबक़ मिला । उन्होंने झूठी प्रशंसा करना छोड़ दिया ।

चोर

अवन्ती का राजा बड़ा ही महत्वाकांक्षी था। उसने अपने राज्य का विस्तार करने के लिए अपने पड़ोसी राजाओं के साथ अनेक युद्ध किये। युद्धों के कारण व्यापारियों में भ्रष्टाचार फैल गया और प्रकृति के प्रकोप के बिना भी देश में अकाल की स्थिति आ उपस्थित हुई।

खाद्यान्न की कमी के कारण देश भर में अधिक चोरियाँ होने लगीं। एक दिन की बात है, राजा के ख़ज़ाने में सेंध लगाने की कोशिश करता हुआ एक चोर रंगे हाथों पकड़ा गया।

मंत्री ने सिपाहियों को आदेश दिया, "इस चोर को छोड़ दो!"

चोर के चले जाने पर राजा ने मंत्री से पूछा, "मंत्रीवर, रंगे हाथ पकड़े गये चोर को आपने छोड़ क्यों दिया?"

मंत्री ने उत्तर दिया, "महाराज, अपराध क्षमा हो। वह चोर निश्चय ही चोरी करने के लिए आया था, लेकिन चोरी करने की स्थिति पैदा करने की जिम्मेदारी हम पर है।"

मंत्री का उत्तर सुनकर राजा की आँखें खुल गयीं। इसके बाद अवन्ती-नरेश ने युद्ध बन्द कर दिया और देश में शांति एवं सुरक्षा की समुचित व्यवस्था की।
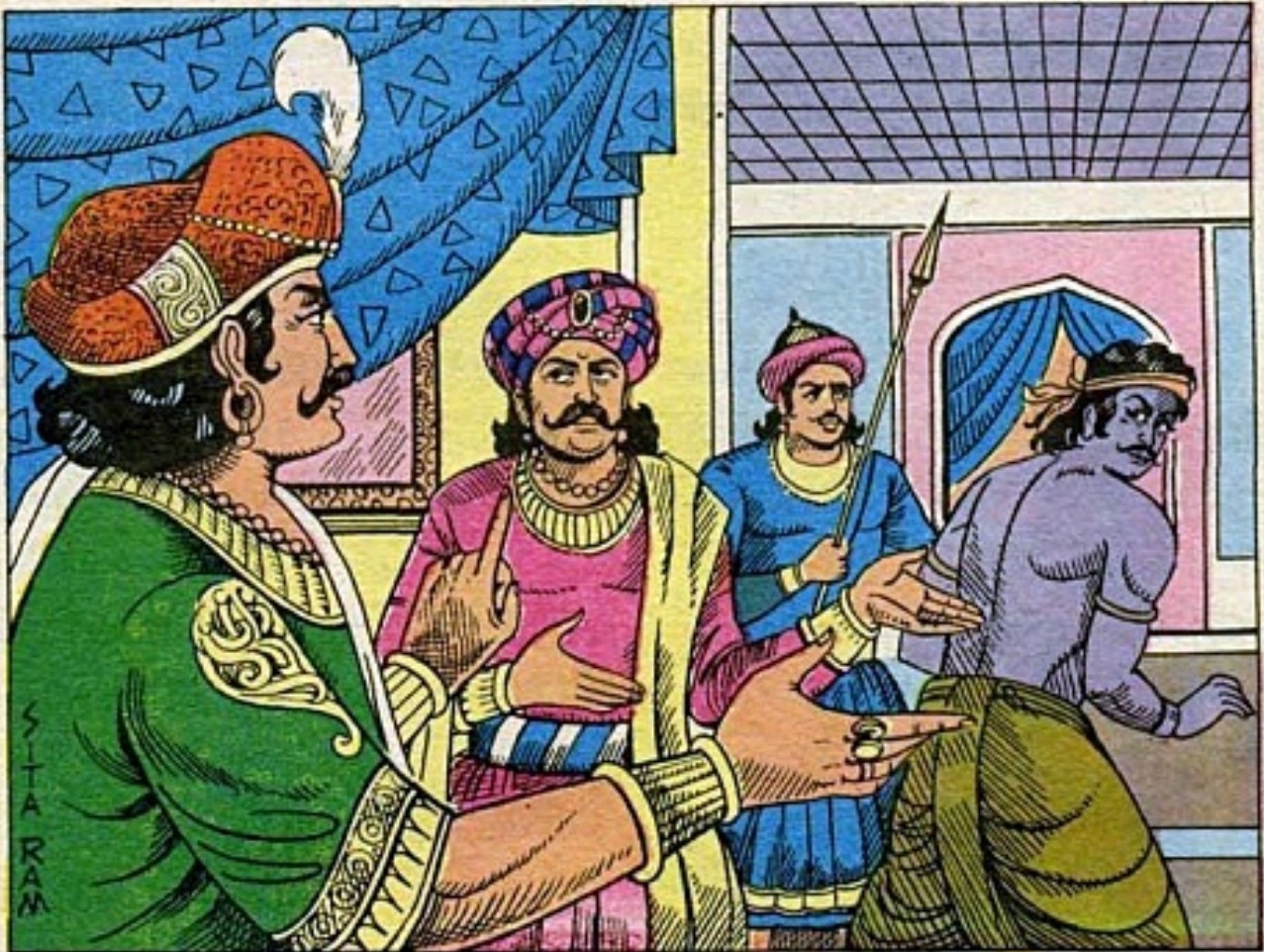
चतुर चारण

भरतपुर गाँव में रामभट्ट नाम का एक चारण रहता था। वह समय के अनुरूप कविता रचने में बड़ा कुशल था। भरतपुर में जहाँ भी कोई मांगलिक कार्य होता, रामभट्ट अवश्य ही वहाँ पहुँच जाता और उस अवसर के अनुकूल उस गृहस्थ की प्रशंसा में कविता सुनाकर पुरस्कार प्राप्त करता। इसी प्राप्त धन से रामभट्ट अपने परिवार का पालन-पोषण करता था।

भरतपुर के प्रायः सभी गृहस्थों के यहाँ से रामभट्ट कोई न कोई पुरस्कार एवं धन प्राप्त कर चुका था, पर भरतपुर के ज़मींदार कर्णसिंह ने उसे कभी एक कानी कौड़ी भी भेंट नहीं की थी। फिर भी ज़मींदार के घर में जब भी कोई शुभकार्य संपन्न होता, रामभट्ट वहाँ अवश्य पहुँच जाता और ज़मींदार की प्रशंसा में कुछ पद्य सुनाकर लौट आता था। कृपण ज़मींदार कर्णसिंह हर बार उससे यही कहता, "वाह! रामभट्ट, तुमने कैसी सुन्दर कविता सुनायी है। इसके लिए तो तुम्हें श्रेष्ठ पुरस्कार मिलना चाहिए। अब आगे जब भी मेरे घर में कोई शुभकार्य होगा, तुम अवश्य आना। मैं तुम्हें पुरस्कार दूँगा।"

ज़मींदार कर्णसिंह के घर में अनेक शुभकार्य हुए और रामभट्ट ने अनेक बार कविता पढ़ी, पर गरीब चारण को कभी एक कौड़ी न मिली।

इसी बीच ज़मींदार कर्णसिंह की बेटी शुभा का विवाह निश्चित हुआ। इस बार रामभट्ट ने मन ही मन यह निश्चय कर लिया कि इस बार ज़मींदार के हाथों से अवश्य एक उत्तम पुरस्कार प्राप्त करना चाहिए। रामभट्ट के यहाँ कोई दुधारू गाय न थी, इससे उसके बच्चों को दूध नहीं मिलता था। उसने सोचा कि ज़मींदार की बेटी शुभा के विवाहोपलक्ष्य में वह किसी न किसी प्रकार एक दुधारू गाय अवश्य प्राप्त करेगा।

ज़मींदार की बेटी के विवाह का अवसर था।

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

ज़मींदार अपने रिश्तेदारों एवं मित्रों के बीच बड़ी प्रसन्नता से बातचीत कर रहा था। रामभट्ट ने ठीक अवसर जान ज़मींदार की प्रशंसा में एक कविता सुनायी। इसके बाद उसने वर-वधू के लिए आशीर्वाद-वाचक अनेक पद्य सुनाये।

रामभट्ट की कविताएँ सुनकर ज़मींदार कर्णसिंह एवं वहाँ पर उपस्थित सभी लोग बहुत आनन्दित हुए। मौक़ा देखकर रामभट्ट ने ज़मींदार से कहा, "मालिक, आपने तो इस बार उत्तम पुरस्कार देने का वचन दिया था। आप जैसा दाता आसपास के किसी गाँव में नहीं। कृपा कर मुझे आज वह पुरस्कार प्रदान कीजिये!"

बन्धु-मित्रों से घिरा जमींदार पुरस्कार देना अस्वीकार कैसे करता? उसने बड़ा उत्साह दिखाते हुए चारण से पूछा, "बोलो, तुम किस प्रकार का पुरस्कार चाहते हो?"

"अन्नदाता, मैं बाल-बच्चोंवाला गृहस्थ हूँ। मुझे तो आप एक दूधारू गाय देने की कृपा कीजिये।" रामभट्ट ने निवेदन किया।

ज़मींदार ने तुरन्त एक नौकर को बुलाकर उसके कान में कहा, "श्यामलाल, तुम पशुशाला से एक बूढ़ी गाय लाकर इस चारण को दे दो!"

श्यामलाल कुछ ही देर में एक बूढ़ी गाय को ले आया। बूढ़ी गाय को देखकर वहाँ उपस्थित सभी लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ।

रामभट्ट ज़मींदार की यह चालाकी देखकर असमंजस में पड़ गया। यदि वह इस गाय को अस्वीकार कर देता है तो ज़मींदार का अपमान होगा। आख़िर उसने एक उपाय सोचा।

रामभट्ट उस बूढ़ी गाय के निकट जाकर उसके
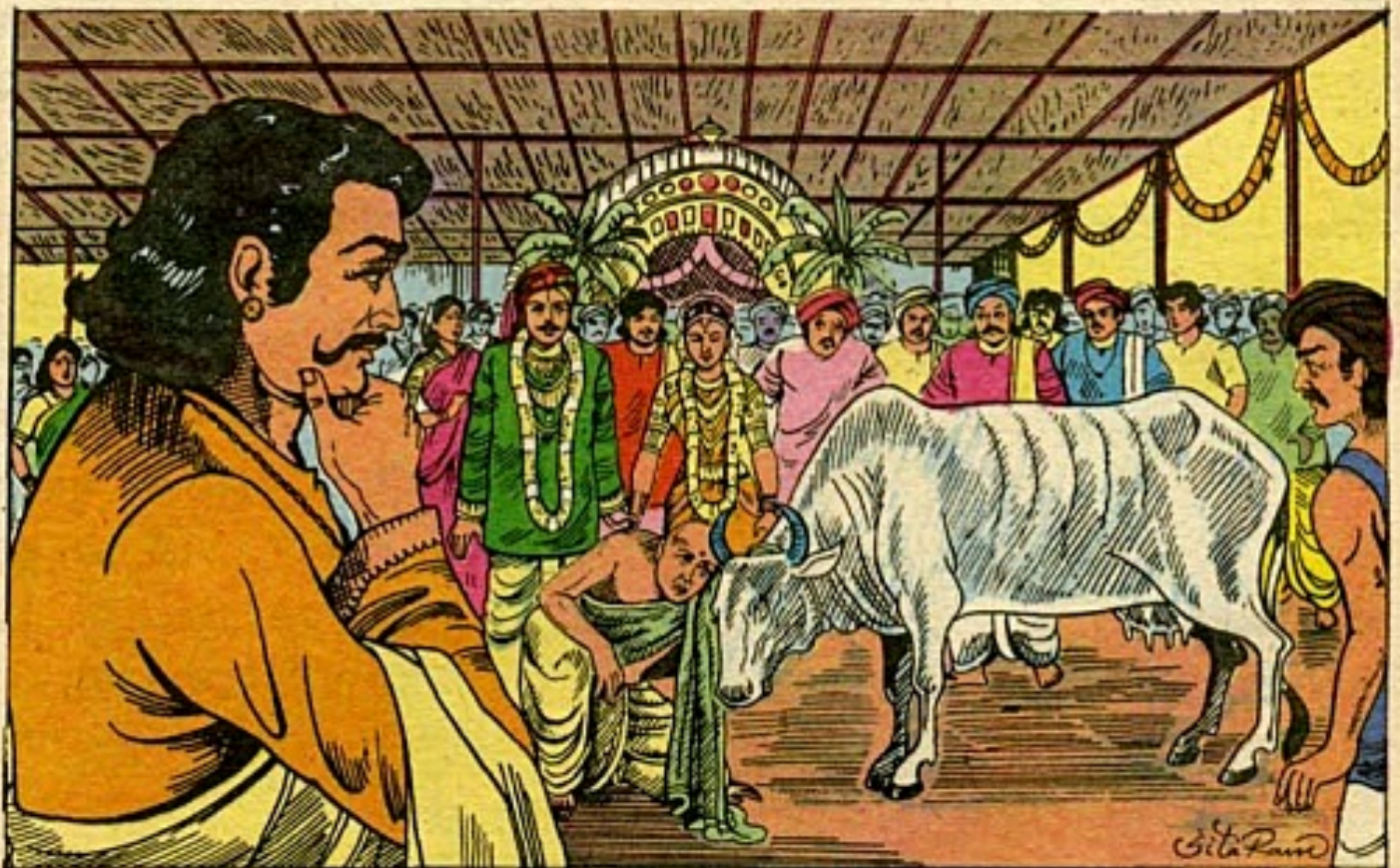
कान में कुछ फुसफुसाने का अभिनय करने लगा। इसके बाद उसने गाय के मुँह के पास अपना कान लगाकर ऐसा स्वांग रचा, मानो गाय उसके कान में कुछ कह रही है ।

ज़मींदार कर्णसिंह ने रामभट्ट का मज़ाक उड़ाते हुए पूछा, "रामभट्ट, यह क्या? तुम गाय के साथ क्या कानाफूसी कर रहे हो?"

"मालिक, मैंने इससे केवल इतना ही पूछा था कि क्या तुम बछड़े ब्याओगी?" रामभट्ट ने कहा ।

ज़मींदार ने उसका परिहास करते हुए पूछा, "तुम्हारे सवाल का गाय ने क्या जवाब दिया ?"

"मालिक, गाय कह रही है कि 'मैं सतयुग में महिषासुर के यहाँ रहा करती थी, लेकिन आदिशक्ति ने महिषासुर का संहार कर दिया सतयुग समाप्त होने पर भी मेरी मृत्य नहीं हुई । फिर त्रेतायुग आया । मैंने रावण का जन्म और रामचंद्र के हाथों उसकी मृत्यु— इन सारी घटनाओं को अपनी आँखों से देखा है । इसके बाद द्वापर युग आया । कंस का जन्म हुआ । कृष्ण ने कंस का संहार किया । यह भी मेरी आँखों देखी घटना है । इसके बाद भी मेरी मौत नहीं हुई । अब कलियुग भी आ पहुँचा है । अब अंतकाल में तुम मुझसे यह सवाल करते हो कि मैं बछड़े ब्याऊँगी या नहीं? यह प्रश्न करते हुए तुम्हें शर्म नहीं आयी? यही बात यह मेरे कान में कह रही है, मालिक!" रामभट्ट ने कहा ।

रामभट्ट की बातें सुनकर सब लोग हँस पड़े । ज़मींदार को बड़ा अपमान महसूस हुआ । शर्म से उसने अपना सिर झुका लिया ।

ज़मींदार कर्णसिंह ने अपनी बात पलटते हुए श्यामलाल को बुलाकर कहा, "अरे मूर्ख, मैंने तुम्हें एक दुधारू गाय को लाने का आदेश दिया था तो तुम यह बूढ़ी गाय ले आये? तुरन्त जाओ गोशाला से एक श्रेष्ठ दुधारू, गाय ले आओ!"

श्यामलाल बूढ़ी गाय को ले गया और एक अच्छी नस्ल की दुधारू गाय ले आया । उस गाय को देखकर रामभट्ट ने ज़मींदार की दानशीलता पर अनेक कविताएँ सुनायीं और वह खुशी-खुशी उस गाय को अपने घर हाँक ले गया।

प्रकृति के आश्चर्य

अमरीका के उष्ण प्रदेशों में पाया जानेवाला स्लाथ नाम का तीन उंगलियोंवाला बिलाव अत्यन्त मंदगति से चलता है। यह स्तन जाति का एक जानवर है और धरती पर प्रति मिनट ३.८ फुट की गति से एवं वृक्षों पर प्रति मिनट २ फुट की रफ़्तार से चलता है।
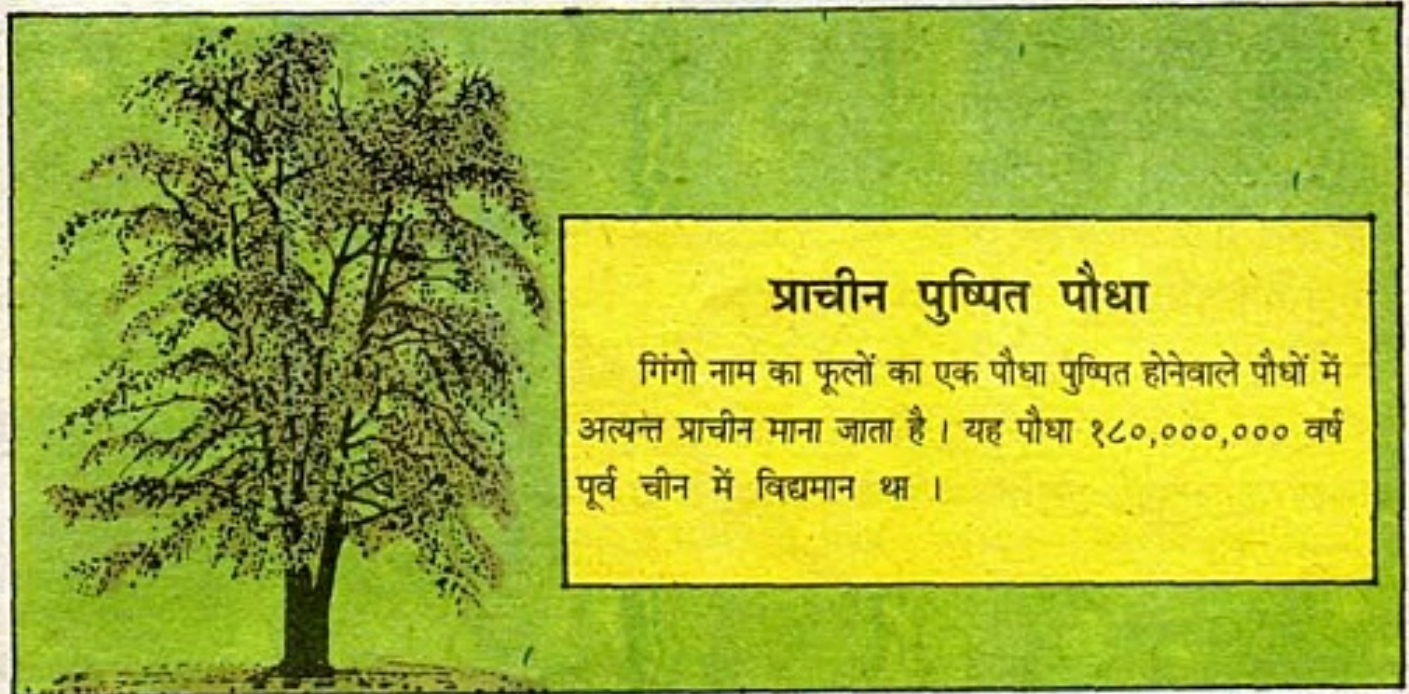
प्राचीन पुष्पित पौधा

गिंगो नाम का फूलों का एक पौधा पुष्पित होनेवाले पौधों में अत्यन्त प्राचीन माना जाता है। यह पौधा १८०,०००,००० वर्ष पूर्व चीन में विद्यमान था।

कोहरा

कनाडा के न्यूफाउंडलैण्ड के ग्रंडबांक्स नाम के प्रदेश में संसार में सबसे अधिक कोहरा गिरता है। वहाँ वर्ष भर में क़रीब १२० दिन कोहरा छाया रहता है।
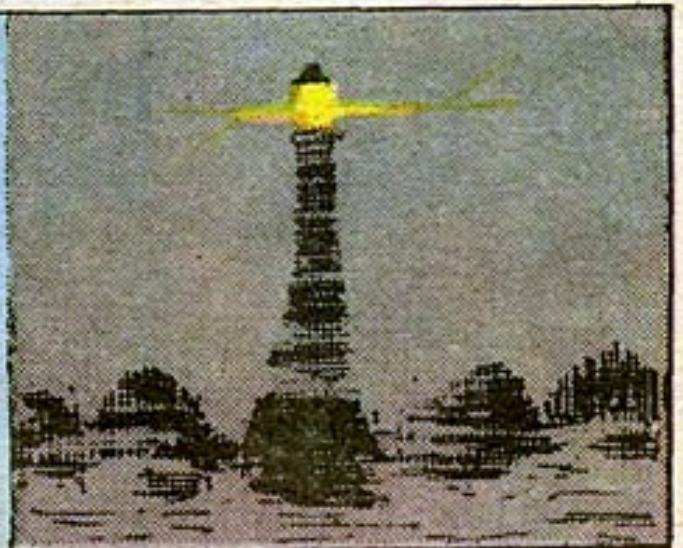
एक नयी ज़बर्दस्त सनसनाहट! सवेरे सवेरे...

पेपरमिंट और पुदीने की ये सनसनाहट तेज़ी से विकसित हो रहे एक ऐसे फ़ार्मूले में है, जो आपके दाँतों को चहकती सफ़ेदी और साँसों को सचमुच ताज़गी देता है.
नया पॉण्ड्स टूथपेस्ट. ये ब्रश करने में एक नयी उमंग जगाए, उसे मज़ेदार बनाए. आपके बच्चे तो इससे और भी बढ़िया तरह से ब्रश करेंगे.

नये पॉण्ड्स टूथपेस्ट का एक ट्यूब आज ही ख़रीदिए. और अपनी हर सुबह एक सुहानी सनसनाहट से भर लीजिए.

Pond's TOOTHPASTE

Pond's TOOTHPASTE

नया
पॉण्ड्स
टूथपेस्ट

स्वस्थ दांत और ताज़ी सांसों का सवेरा

OBM 9795 HIN

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ फ़रवरी १९८७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

S. Balasubramanian

S. B. Prasad

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ दिसम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अक्तूबर के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : ख़्वाबों में अकसर !

द्वितीय फोटो : बनता हूँ डाक्टर !!

प्रेषक : कु. कविता द्वारा हरिकृष्ण पटेल, राधाकृष्ण मंदिर मार्ग, मानिकपुर, रायगढ (म.प्र.)

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३०-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीस, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास -६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

चन्दामामा

मनोरंजक एवं ज्ञानवर्द्धक उत्कृष्ट मासिक पत्र

* चन्दामामा हमारे पुराण व साहित्य के श्रेष्ठ रत्नों को क्रमबद्ध रूप में प्रदान करता है ।
* व्यापक दृष्टिकोण को लेकर विश्व साहित्य की अद्भुत काव्य कथाओं को सरल भाषा में प्रस्तुत करता है ।
* मृदुहास्य, ज्ञानवर्द्धक तथा मनोरंजक सुन्दर कहानियों द्वारा पाठकों को आकृष्ट करता है ।
* हमारी पुराण गाथाओं को प्रामाणिक रूप में परिचय करता है ।
* हास्यपूर्ण प्रसंगों तथा व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने वाले शीर्षकों के साथ पाठकों का उत्साह वर्द्धन करता है ।
* चन्दामामा केवल आपके जीवन में ही नहीं बल्कि आपके बन्धु एवं मित्रों के जीवन में भी रचनात्मक पात्र का व्यवहार करता है । इसलिए आप अपने घनिष्ट मित्रों को चन्दामामा भेंट कीजिए ! उपहार में दीजिए !

बच्चों के लिए प्रस्तुत चन्दामामा, पाठकों में नवयौवन का उत्साह एवं आनन्द प्रदान करता है ।

तेरह भाषाओं में प्रकाशित चन्दामामा का साप किसी भी भाषा का ग्राहक बन सकते हैं !

तेलुगु, तमिल, हिन्दी, अंग्रेज़ी, असामी, बंगाली, गुजराती, कन्नड, मलयालम, मराठी, उडिया, पंजाबी और संस्कृत ।

वार्षिक चन्दा: रु. ३०-००

आप किस भाषा का चन्दामामा चाहते हैं, इसका उल्लेख करते हुए निम्न लिखित पते पर अपना चन्दा भेजिए:

डाल्टन एजेन्सीस

चन्दामामा बिल्डिंग्स,

वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

पारले
राम और श्याम से विचित्र प्राणी की मुलाकात
राम और श्याम अकेले और सुनसान समुद्र का किनारा, अचानक चमक उठा आसमान में जगमग सितारा.
उज्ज्वल आसमान से उतर रहा था एक भीमकाय चमकता गोला...
अरे, यह तो उड़न तश्तरी लगती है.
करीब पहुँचते ही तश्तरी उड़न छू हुई. मगर झाड़ियों से अजीब सी आवाज़ आयी.
राम और श्याम हुए चकित!
ये प्राणी तो विचित्र लगता है.
शायद हमसे डरता है.
हम इसे अपना लेंगे.
इसे पी.पी. कहकर बुलाएंगे, पॉपिन्स दे कर दोस्त बनाएंगे.
राम और श्याम को प्राणी से लगता था डर. उसके सामने रखी पॉपिन्स और देखने लगे असर.
रंग-बिरंगी पॉपिन्स ने पी.पी. का मन ललचाया, पॉपिन्स का स्वाद उसे खूब भाया.
देखते-देखते ही पी.पी. ने दोस्ती का हाथ बढ़ाया राम और श्याम को ये देख बड़ा मज़ा आया.
पॉपिन्स!
वाह! पी.पी.! वाह! पारले पॉपिन्स!
रसीली. प्यारी. मज़ेदार
पारले पॉपिन्स
PARLE
POPPINS